वैज्ञानिक कहानियाँ

शंकर परसाई

मिश्र-बन्धु-कार्यालय, जबलपुर

आन्ध्रप्रदेश शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत

वैज्ञानिक कहानियाँ

[तैलंगाना क्षेत्र की ग्यारहवीं कक्षा के लिए नॉनडिटेल्ट प्रथम भाषा की पाठ्य-पुस्तक]

★

लेखक—

श्री हरिशंकर परसाई

★

प्रकाशक—

मिश्र-बन्धु-कार्यालय

जबलपुर

आन्ध्र-प्रदेश शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत

वैज्ञानिक कहानियाँ

[तैलंगाना क्षेत्र की ग्यारहवीं कक्षा के लिए नॉनडिटेल्ड प्रथम भाषा की पाठ्य-पुस्तक]

लेखक
श्री हरिशंकर परसाई

प्रकाशक
मिश्र-बन्धु-कार्यालय,
जबलपुर

प्रकाशक :
मिश्र-बन्धु-कार्यालय,
जबलपुर

मुद्रक
अशोक मुद्रण गृह,
१५ बी, हैमिल्टन रोड,
जार्जटाउन, इलाहाबाद
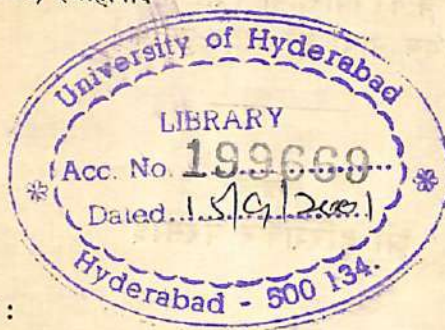
आवृत्ति :
१९६४

मूल्य
१ रु० ८० पैसे

भूमिका

विज्ञान और मानव जाति

जीव-सृष्टि में मानव काफी पीछे की उत्पत्ति है। प्रथम बार जब मनुष्य पृथ्वी पर उपजा तब वह निपट अकेला, साधनहीन और निर्बल रहा होगा। उससे कई गुने बड़े और भयंकर जानवर इस पृथ्वी पर थे, जो उसे निगल जाना चाहते थे। उसके आस-पास भयानक वन थे, जिनमें भयंकर हिंसक जीव उस छोटे-से प्राणी को निर्मूल करने को तैयार थे। इधर प्रकृति भी उसके विरुद्ध थी। शीत, गर्मी और वर्षा से रक्षा का उसके पास कोई उपाय नहीं था। वह फल बटोरने निकलता और इतने में बारिश होने लगती और वह भूखा ठिठुरता हुआ अपनी गुफा में पड़ा रहता। आज हम अपने उन आदि पुरुषों के जीवन की कल्पना नहीं कर सकते। मनुष्य जैसा छोटा प्राणी अस्तित्व के संघर्ष में कैसे जीत सका? यह कैसे सम्भव हुआ कि वह सम्पूर्ण जीव-सृष्टि का नायक बना?

मनुष्य के पास एक शक्ति है, जो अन्य जीवधारियों के पास नहीं है या अपेक्षाकृत बहुत क्षीण है। वह है—विचार करने की शक्ति; बुद्धि। यही उसका अस्त्र रहा है। इसी के बल पर उसने नई-नई बातें सोचीं, नई-नई चीज़ें बनायीं और अपने जीवन का विकास किया। उसने पहिले पत्थर के और फिर लोहे के अस्त्र बनाये और जंगली जानवरों से अपनी रक्षा की। उसने प्रकृति के रहस्यों का पता लगाया और प्राकृतिक शक्तियों का अपने लाभ के लिए उपयोग किया। उसने

एक ओर तो प्रकृति की विनाशक शक्तियों से अपनी रक्षा की ; दूसरी ओर उन्हें वश में करके उनका उपयोग किया । बिजली यदि गिर कर नाश करती है तो मनुष्य ने अपने मकान के ऊपर लोहे की छड़ लगायी है, जो बिजली को ज़मीन में उतार देती है । शीत पड़ती है, तो वह गरम कपड़े पहिन लेता है और बिजली से कमरे में उष्णता पैदा कर लेता है । पानी को रोक कर वह बिजली बनाता है और उससे कारखाने चलाता है; पानी की भाफ से वह एंजिन चलाता है । हज़ारों मील दूर के आदमी से वह बात कर लेता है और उसकी सूरत भी देख लेता है । हजारों मील के वेग से वह आकाश में उड़ता है । रात अंधकार लेकर आती है ; पर मनुष्य बिजली के प्रकाश से रात को दिन बना देता है ।

यह सब विकास बुद्धि के कारण हुआ । मनुष्यों में जो चिंतक और मनीषी थे उन्होंने नयी-नयी खोजें कीं और उन्हें मानव-जीवन को सुखी बनाने में लगाया । ये वैज्ञानिक पृथ्वी के हर कोने में हुए हैं । आज पश्चिम विज्ञान में बहुत आगे बढ़ा है ; पर ऐसा हमेशा नहीं रहा । मनुष्य जीवन में क्रांति कर देने वाले कितने ही आविष्कार पूर्व में बहुत पहिले हो चुके थे । भारत और चीन की सभ्यता विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में हैं । इसका अर्थ है कि जीवनोपयोगी कितनी ही वस्तुओं की खोज इन देशों के लोगों ने पहिले कर ली थी ।

विज्ञान के क्षेत्र में भेद नहीं है । ज्ञान-विज्ञान सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए है । वैज्ञानिक जब कोई नई खोज करता है, तब उसकी दृष्टि में सम्पूर्ण मानव-जाति का हित रहता है । यदि किसी वैज्ञानिक की खोज का उपयोग कोई देश दूसरे देशों के मनुष्यों का नाश के लिए करता है, तो वह विज्ञान के आधार पर ही कुठाराघात करता है ।

धीरे-धीरे मनुष्य नयी-नयी शक्तियाँ खोजता गया और नये निर्माण करता गया । वैज्ञानिक का कार्य एक तपस्या है । उसे निष्ठापूर्वक,

एकाग्रता से अपनी साधना करनी पड़ती है। अपने मार्ग में उसे अनगिनत बाधाएँ मिलती हैं ; उसे असहनीय पीड़ा भोगनी पड़ती है ; कभी-कभी तो उसे नये ज्ञान के लिए कठोर दंड भी भुगतना पड़ा है।

एक प्राचीन ग्रीक कथा है। प्रोमेथ्यियस नामक मानव ने देखा कि देवों के पास अग्नि है, मनुष्यों के पास नहीं है। उसने सोचा कि यदि मनुष्य जाति को अग्नि मिल जाय, तो उसका जीवन कितना सुखी हो जाय। वह एक दिन देवों की अग्नि चुरा लाया। बाद में वह पकड़ लिया गया और उसे सूर्य के पास एक चट्टान से बाँधा गया जहाँ रोज गिद्ध उसे चोथते थे। मनुष्य जाति के लिए अग्नि का रहस्य लाने का उसे यह दंड मिला। इस कथा से वैज्ञानिक की स्थिति की दूसरी व्याख्या हो जाती है। वह प्रकृति की शक्तियों को वश में करके मानव-जाति के लाभ के लिए उनका उपयोग करता है, पर उसका अपना जीवन दुःखी होता है। विश्व के अधिकांश वैज्ञानिकों को अपने जीवन में, अपने ही साथी मनुष्यों के हाथों, बड़ी यातनाएँ सहनी पड़ीं। अंध-विश्वासों से जकड़ा समाज नये ज्ञान को जल्दी स्वीकार नहीं करता और ज्ञान देने वाले पर क्रोध करता है; उसे दंडित करता है। गेलिलियो को इस ज्ञान के लिए बड़ी यातना सहनी पड़ी कि पृथ्वी सूर्य के आसपास घूमती है। आज यह बात हर बच्चा जानता है, पर गेलिलियो के ज़माने में यह बात कहना अपराध माना गया था। जब जार्ज स्टीफेन्सन ने पहिली रेलगाड़ी चलाई, तो ब्रिटिश संसद के विद्वान सभासदों ने कहा कि इसे बंद करना चाहिये क्योंकि इसे चलाने वाला कोई भूत-प्रेत है और इससे देश पर संकट आयगा। प्रायः हर नये आविष्कार के प्रति समाज का ऐसा ही विरोधी रुख रहता है।

विज्ञान का उद्देश्य मनुष्य-जाति का भला करना है; उसे सुखी और सम्पन्न बनाना है। यह बड़ी घृणित बात है कि उसका उपयोग संहार के लिए हो। जिसने वायूयान बनाया, उसे क्या पता था कि

इसके द्वारा निर्दोष नागरिकों पर बम गिराये जायेंगे ! अणु की शक्ति की खोज करने वाले वैज्ञानिक को क्या मालुम था कि किसी दिन अणु बम बनेगा और कल्पनातीत विनाश करेगा।

आज विश्व में दो शक्ति-गुट बन गये हैं। दोनों ने विज्ञान की खोजों का उपयोग संहारक अस्त्रों के लिए किया है। अणु-बम, उद्जन बम, कोबल्ट बम ऐसे भयंकर हैं कि यदि युद्ध हुआ, तो समूची मानव-जाति ही मिट जायगी। विज्ञान के वरदान अभिशाप के रूप में बदल गये हैं। इसलिए आज सबसे बड़ी आवश्यकता है शांति की और निःशस्त्रीकरण की। विज्ञान का विनाशक उपयोग रोकना होगा।

इस पुस्तक में ऐसे ही वैज्ञानिक खोजों और आविष्कारों से सम्बंधित कहानियाँ हैं, जिनसे मनुष्य-जीवन में क्रांति हो गयी। इनसे विज्ञान के मानवी पक्ष की झलक मिलती है। इनसे वैज्ञानिकों के जीवन का भी आभास मिलता है। इनसे यह भी ज्ञात होगा कि कैसे कोई आकस्मिक बात मनुष्य-जाति के जीवन को बदल गयी। ये कथाएँ यथासंभव रोचक शैली में लिखी गयी हैं। सूक्ष्म वैज्ञानिक तथ्यों का इनमें समावेश नहीं किया गया है, जिससे ये सामान्य पाठक के लिए भी रोचक और उपयोगी हो गयी हैं।

इस पुस्तक की पाठ्य-सामग्री आन्ध्र प्रदेश शिक्षा-विभाग के आदेशानुसार नई लिपि में छापी गई है।

—लेखक

विषय-सूची

—:o:—

—:०:—

यूरेका ! यूरेका !!

सम्राट् के चेहरे पर परेशानी थी। उसके जीवन में यह पहला अवसर था, जब उसने अपने किसी कर्मचारी पर अविश्वास किया था। सम्राट् हिएरो को यह दुविधा थी कि वह अपने मन की बात प्रकट करे, या न करे। लेकिन फिर दुविधा असह्य हो उठी।

हिएरो तिलमिला उठा। उसके दरबार में प्रसिद्ध विद्वान्, मूर्धन्य वैज्ञानिक और कुशल शिल्पी, सभी समान रूप से आदर पाते थे। दरबार का ही एक जौहरी सम्राट् का मुकुट बनाकर लाया था, सोने का जगमगाता मुकुट ! लेकिन यह क्या ? सम्राट् के अंतःकरण में जैसे लोहे की कील पैठ गई। उसे जौहरी की ईमानदारी पर संदेह हुआ। लगा, जैसे जौहरी ने कुछ स्वर्ण चुराकर उसकी जगह चाँदी मिला दी है।

उसने एक वयस्क वैज्ञानिक की तंद्रा भंग कर दी। वैज्ञानिक शांत बैठा था अब तक। राजा ने कहा, "आर्कमिडीज़, मैंने तुम्हारी प्रतिभा का सदैव लोहा माना है। आज मैं एक बड़ी उलझन में हूँ। चाहता हूँ, तुम मेरी सहायता करो।"

"बोलिए, सम्राट्, क्या चाहते हैं आप ?"

पहले तो हिएरो कुछ कहते-कहते रुक गया, मानो फिर किसी दुविधा में पड़ गया हो। फिर एक क्षण बाद बोला— "तुमने मेरा सोने का मुकुट तो देखा ही होगा। जो अभी बनकर आया है, वही मुकुट। पता नहीं क्यों, मुझे लगता है, वह शुद्ध सोने का नहीं है। तुम सही बात का पता लगा सकते हो ?"

सुनकर वैज्ञानिक स्तब्ध रह गया—खेद से नहीं, वरन् आश्चर्य से।

उसे कुछ उत्तर न देते देख हिएरो ने फिर कहा—"यों असमंजस में पड़ने की आवश्यकता नहीं, आर्कमिडीज़। मैं किसी पर चोरी का इल्जाम नहीं लगा रहा हूँ। बस, उत्सुकता समझ लो।"

खिन्न हृदय से आर्कमिडीज़ फीकी हँसी हँसा। उसकी आँखों के आगे मानो वह मुकुट आ गया हो। फिर उसने कहा, "दीजिए मुकुट, मैं भरसक प्रयत्न करूँगा।"

वैज्ञानिक विचारों में डूब गया।

सम्राट् प्रसन्न हो गए कि उन्हें एक ऐसा व्यक्ति मिल गया है, जो उनकी आत्मा में उठी विरोधी आवाज़ का उचित समाधान खोजेगा।

आर्कमिडीज़ के व्यक्तित्व में इतना सामर्थ्य था कि एक सुनिश्चित योजना के सहारे असलियत जान सके और दुनिया के सम्मुख विज्ञान का सर ऊँचा कर सके।

आर्कमिडीज़ की दोनों आँख, सम्पूर्ण चेतना केन्द्रित थी सम्राट्-द्वारा दिये गये सुन्दर स्वर्ण-मुकुट पर।

कई दिन बीत गये। कोई हल सूझ नहीं रहा था। वैज्ञानिक के चेहरे का एक-एक स्नायु पीड़ा से तिलमिलाने लगा। "किस दिन, कैसे सत्य प्रकट होगा, कौन जाने," वह सोचता।

समय सरकता जाता था।

एक दिन आर्कमिडीज़ अपने नगर के मध्य में स्थित स्नान-गृह में नहाने गया, रोज की तरह। वह जाते समय प्रत्येक वस्तु का अवलोकन कर रहा था और सोच रहा था कि शायद यह अवलोकन अंतिम हो। फिर शायद वह हार मान ले और मुकुट का रहस्य जाने बिना उसे सम्राट् को लौटा दे। यह सोचकर

वह टब में भरे पानी को बार-बार देख रहा था। उस पानी में ऐसा अद्भुत आकर्षण था कि दृष्टि जहाँ भी डाली जाती, अटक जाती थी।

कुशल वैज्ञानिक और कवियों के समान भावुक हृदय वाला आर्कमिडीज़ कुछ क्षण बुत-सा खड़ा रहा। फिर धीरे-धीरे उसने एक-एक कर कपड़े उतारे। एक क्षण आर्कमिडीज़ ने चारों ओर देखा और फिर मुँह फेर लिया। व्याकुल-सा होकर उसने टब में पैर डाल दिये। टब पानी से लबालब भरा था। जल्दी से वह पानी में बैठकर नहाने का उपक्रम करने लगा। पर यह क्या? आश्चर्य से उसने उधर गर्दन घुमाई, जिस ओर पानी गिर गया था। वह उस ओर झुक गया। उसने सोचा, देखूँ तो क्या वास्तव में मेरे टब में घुसते ही थोड़ा पानी गिर गया है। और जब झुककर उसने देखा कि पानी टब से बाहर आ गया था और पतली धार में धरती पर बह रहा था, तो वह ठगा-सा रह गया।

यह कैसा संयोग ! उसकी कल्पना-दृष्टि में अनगिनत चित्र बने और बिगड़े।

पागल-सा, चिल्लाता हुआ आर्कमिडीज़ सिरेकस की सड़कों पर भागता गया।

"यूरेका, यूरेका, यूरेका....।" (खोज लिया! खोज लिया!)

वह स्वतः हैरान था कि उसने उस नितांत साधारण घटना से इतना महत्वपूर्ण रहस्य कैसे जान लिया ! और अंत में वह अपनी समस्या का हल पा गया था।

पर वैज्ञानिक अपनी इस उपलब्धि की परीक्षा करना चाहता था। घर पर आवश्यक साधारण सामग्री के सहारे उसने कई प्रयोग किये और दुनिया के सामने अपना एक सिद्धांत प्रतिपादित किया। खुद आर्कमिडीज़ तब न जान पाया होगा कि

उस सिद्धांत के बल पर ही वह विज्ञान की दुनिया में सदा के लिए अमर हो जायगा। अधिकांश विद्यार्थी आर्कमिडीज़ को केवल इसी सिद्धांत के कारण जानते हैं। न तो इसमें बड़े और पेचीदा समीकरण हैं और न कठिन यंत्रों की आवश्यकता।

आर्कमिडीज़ भागता-भागता घर लौटा और जुट गया अपने प्रयोग में।

पूरा का पूरा सोने का मुकुट उसने पानी से भरे एक बर्तन में डुबा दिया। डरते-डरते लेकिन मन में अभूतपूर्व विश्वास लिये आर्कमिडीज़ ने मुकुट के वजन के बराबर सोना लेकर उसे भी पानी से भरे बर्तन में डुबाया। उतनी चाँदी भी इसी प्रकार डुबाई गई।

और आर्कमिडीज स्वतः अपनी आँखों पर एकाएक विश्वास न कर सका। उसने देखा कि मुकुट द्वारा हटाये गये पानी की मात्रा शेष वस्तुओं द्वारा हटाये गये पानी की मात्रा से भिन्न है। यह सर्वथा नया अनुभव था। बार-बार उसने प्रयोग किया, पर प्रत्येक बार उसी परिणाम पर पहुँचा।

इसको उसने इस प्रकार कह दिया—'प्रत्येक वस्तु एक सीमित मात्रा का द्रव हटाती है।' इतनी सीधी-सादी बात ! पर कितनी उपयोगी और अर्थपूर्ण !

सिरेकस के सम्राट् हिएरो ने पूछा, 'आर्कमिडीज़ तुमने क्या पता लगाया है ?'

आर्कमिडीज़ ने एक अर्थ-पूर्ण दृष्टि सम्राट् पर फेंकी। उसे लगा, वास्तव में सम्राट् कुछ जानने को उत्सुक हैं। उसने कहा, "मेरा मत है, आपका मुकुट मिलावटी सोने का बना है। उसमें निःसंदेह चाँदी मिली है।"

इतनी दृढ़ता उसके स्वर में, इतना आत्मविश्वास उसकी आत्मा में, पहले कभी नहीं था।

बातों की प्रत्येक कड़ी सम्राट् हिएरो पकड़ रहे थे। उन्हें आश्चर्य और हर्ष हो रहा था। हिएरो ने प्रसन्नता से खिलकर कहा, "मुझे कुछ नहीं कहना है। हाँ, तुम पर मुझे गर्व है, आर्कमिडीज़........।" सम्राट् हिएरो अचानक रुक गया, मानो किसी गम्भीर विचार में डूब गया हो !

आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व सीमित साधनों के होते हुए भी आर्कमिडीज ने चालीस से अधिक आविष्कार किए हैं। कुछ आविष्कार का उपयोग मानव जाति की सेवा के लिए किया जाता था और बहुत-से आविष्कारों को सैनिक महत्व प्राप्त हुआ था।

आर्कमिडीज़ उस समय का एक अत्यन्त लोकप्रिय व्यक्ति बन गया था। उसका पद साधारण जनता और विद्वानों में बहुत ऊँचा था। उसका ज्ञान भी असीमित था। जिधर से गुजरता लोगों के सर झुक जाते। स्वयं आर्कमिडीज़ बहुत संकोची था और किसी भी प्रकार के विज्ञापन से सदा दूर भागता था।

उस समय भी नदियाँ शहरों के पाँव चूमती हुई बहती थीं, जो इनके किनारों पर आबाद थे। इन शहरों के अनेक भाग बंजर थे और वहाँ इन नदियों का पानी ले जाना असम्भव प्रतीत होता था। एक तरफ थिरक-थिरक कर बहने वाला पानी और दूसरी ओर बंजर धरती !

लोगों का विश्वास था कि आर्कमिडीज किसी भी प्रकार से ऐसा उपाय खोज निकालेगा, जिससे बंजर धरती तक पानी पहुँचाया जा सके। इतनी ऊँचाई तक पानी पहुँचाना कोई आसान काम नहीं था।

हर समय आर्कमिडीज़ गहरी चिन्ता में डूबा रहता।

दुनिया के सामने एक नई चीज प्रस्तुत करने का प्रश्न था, जो समस्त विश्व में क्रांति मचा दे।

गर्मी की दोपहरें, ठंड की रातें, वह जलाशयों के समीप गुजारा करता; सोचता रहता। वह बहते हुए दरिया की लहरों को देखकर हँसता रहता। उसके माथे पर कभी बल तक न आया था। वह किस बात पर हँसता था, इसका किसी को पता नहीं था। उसके आनन्द और मस्ती का भेद भी कोई नही जानता था। लोगों की उसके बारे में अनेक धारणाएँ थीं।

एक दिन उसने एक पोला बड़ा-सा पेंच लिया और उस पेंच को लेकर एक तिरछी-ऊँची सतह के पास गया।

पेंच को वह और लोगों की सहायता से घुमाने लगा। परिणाम पर स्वयं आर्कमिडीज़ को आश्चर्य हुआ।

"ऐसा क्यों ?" आर्कमिडीज़ ने सबको संकेत करके कहना शुरू किया, "यह बात तो मुझे बिलकुल पागल बना देगी।"

सब लोगों ने एक कण्ठ से आर्कमिडीज़ की बुद्धिमानी की प्रशंसा की और उसका यह प्रयोग दुनिया के कोने-कोने में प्रसिद्ध हो गया।

नीचे धरातल से, केवल पोल पेंच की सहायता से सैकड़ों फुट ऊँचे तक पानी पहुँचा देना ! शिल्पकारों, मजदूरों, किसानों और इंजीनियरों ने एक स्वर से उसे सराहा।

आज भी हालैण्ड में पानी चढ़ाने के लिए इसी पेंच का उपयोग किया जाता है।

सिरेकस साम्राज्य सदा-सदा जीवित रहने के लिए बनाया गया था। उस साम्राज्य में बनी इमारतें शिल्प की दृष्टि से अद्वितीय थीं। रात्रि के मौन वातावरण में वहाँ और भी अच्छा लगता।

रोमन लोग सिरेकस को अपने अधिकार में लेना चाहते

थे। वे अक्सर सिरेकस पर चढ़ाई करते रहते थे। रोमन साम्राज्य के पास बड़े-बड़े जहाज और कुशल नाविक थे।

एक बार मारसेल्स के नेतृत्व में रोमन सेना ने सिरेकस पर धावा बोल दिया।

सम्राट् हिएरो ने ऐसे विकट संकट के समय बड़ी गम्भीरता से आकाश की ओर आँखें उठाईं और थोड़ी देर तक टिमटिमाते सितारों को देखा। फिर वहाँ से नजरें उठाकर उसने अपने सामने बैठे लोगों के समुद्र पर टिका दीं। एक बार फिर उसने स्थिति की गम्भीरता का अनुभव किया।

अचानक ही उसकी दृष्टि आर्कमिडीज़ पर पड़ी। बिना किसी झिझक के हिएरो ने आर्कमिडीज़ से कहा, "वैज्ञानिक तुमने मनुष्य मात्र की तो बहुत सेवा की है, विज्ञान के क्षेत्र में तुमने बहुत कुछ किया है। इस समय हमारी सीमा खतरे में है। दुश्मन बढ़ा चला आ रहा है कुछ करो वैज्ञानिक कि जिससे मारसेल्स और उसके साथी सैनिक हमारा कुछ न बिगाड़ सकें। बोलो, क्या कहते हो?"

यह सुनकर आर्कमिडीज़ मुस्कराया। सचमुच ही वह बहुत खुश था। उसने धीरे से कहा, "सम्राट्, नदी और समुद्र का पानी सूख जायगा। खेतियाँ सूख जायँगी। पेड़, घास और हरियाली भस्म हो जायगी। मनुष्य काल के गाल में चले जायँगे। यह रोमन जाति खत्म हो जायगी। मेरे पास जलते दर्पणों का भंडार है। आप किसी प्रकार की चिन्ता न कीजिये।"

मारसेल्स अपनी वीरता के नशे में चूर सिरेकस को जीतने बढा आ रहा था। सिरेकस की सेना अपने राज्य की रक्षा करने में समर्थ तो नहीं थी लेकिन उसे आर्कमिडीज़ पर पूर्ण विश्वास था। उसकी असाधारण योजनाओं पर भरोसा था।

नियत समय पर आर्कमिडीज़ मुट्ठी भर सहायकों के साथ

समुद्र के एक किनारे आ जमा। सहायकों के पास बड़े-बड़े, चमकदार नतोदर दर्पण थे। मिलकर, उन्होंने सूरज की तेज किरणों को उन नतोदर दर्पणों के द्वारा आती हुई सेना पर केन्द्रित करना प्रारम्भ किया। देखते-देखते मारसेलस की सेना में भाग-दौड़ मच गई। जिसको जहाँ जगह मिली वहाँ भागा। सेना पल भर में तितर-बितर हो गयी। कहते हैं, सैकड़ों सैनिकों ने अपनी दृष्टि खो दा। मारसेलस खुद न समझ पाया कि उन जलती विनाशक किरणों से कैसे रक्षा की जाए! अस्त्र-शस्त्र हों तो एक बात भी है!

आर्कमिडीज़ के नाम के साथ कुछ वैज्ञानिक उपरोक्त घटना जोड़ना अनुचित मानते थे। उन्हें ऐसे अद्भुत और अचूक प्रयोग पर विश्वास ही नहीं होता था।

पर सर आइज़क न्यूटन ने ऐसे लोगों को सलाह दी है कि वे आर्कमिडीज़ की क्षमता और दूरदर्शिता पर शंका न करें। ऐसा करना सभी दृष्टियों से सम्भव है।

इतनी विपत्ति और हानि के बावजूद रोमन राजा और सेनापति सिरेकस को नीचा दिखाना चाहते थे, उसे अपने अधीन करने का स्वप्न देखते थे।

दूसरी बार रोमन सेना मारसेलस के ही नेतृत्व में सिरेकस पर चढ़ाई कर बैठी। इस बार इसके पास बड़े, सुसज्जित जहाज थे। हिएरो तो घबरा गया और अब किसी भी प्रकार की रक्षा का विचार भी उसने त्याग दिया।

फिर भी आर्कमिडीज़ की सलाह ली गयी। सदा की भाँति वैज्ञानिक ने सारी समस्या से मुकाबला करने की पुनः ठान ली।

"पर, कैसे?"

"बस, आप देखते रहिये।"

"मुझे तो विश्वास ही नहीं होता।"

"मेरा बस चले तो, मैं तो इस पृथ्वी को ही उठाकर लटका लूँ। हाँ, मुझे और कहीं पैर टिकाने भर को जगह मिल जाए।"

"भगवान तुम्हें सफल करे।"

इस चुनौती का सामना भी किया आर्कमिडीज ने। घिर्री और टेक की सहायता से उसने जहाजों को गेंद की तरह उठाकर दूर समुद्र में फेंक दिया। कई जहाजों को तो इन घिर्रियों की सहायता से हवा में लटका लिया जाता और किसी पास की पहाड़ी पर बार-बार टकराया जाता; बड़ी दुर्दशा की जाती। रोमन सेना ने बहुत हानि उठाई और वे सभी निश्चित रूप से डर गये। बहुत दिनों तक रोमन सेना इस प्रयोग से भयभीत रही। अगर रोमन सिपाही कहीं भी रस्सी का टुकड़ा लटकते देखते तो सर पर पैर रखकर भाग खड़े होते। कहते, "आर्कमिडीज़ आ गया, आर्कमिडीज़ आ गया।"

सिरेकस को इस प्रकार दुशमनों से बचाता रहा, आर्कमिडीज़। किसी की भी एक न चलती उस महान वैज्ञनिक के आगे। रेखा-गणित के उस 'राक्षस' से सब भयभीत रहते।

एक रात चाँदनी से सारी प्रकृति नहा रही थी। चन्द्रमा की किरणों ने वातावरण में एक अजीब-सी मिठास भर दी थी। ऐसी मोहक रात्रि में सिरेकस निवासी एक स्थान पर एकत्रित थे। वे सुध-बुध खोकर, शराब के नशे में चूर, चाँद की देवी आटमिस की पूजा में व्यस्त थे। शराब के दौर चल रहे थे। नृत्य-गान का भी अन्त न था। उस नशीली तरंग में सभी नागरिक और सैनिक बहे जा रहे थे।

पर इस सब से रोमन लोगों को कुछ मतलब नहीं था। चोट खाये शेर की तरह वे किसी अच्छे मौके की तलाश में तो थे ही। इसका इन्होंने पूरा लाभ उठाया।

सैंकड़ों रोमन सैनिक सिरकेस का परकोटा लाँघकर शहर

में घुस गये और अधिक सैनिकों को आने देने के लिए उन्होंने मुख्य द्वार खोल दिया।

हजारों निहत्थे सिरेकस निवासियों का खून बहा दिया गया। बहुत मँहगी न थी रोमनों की वह विजय। खुशी से वे फूले नहीं समाते थे। उनके उत्साह की सीमा न थी।

चाहते तो थे वे कत्ले आम करना, लूटपाट करना, आगजनी करना और सिरेकस को पैरों तले रोंदना; पर मारसेल्स ने सैनिकों को हुक्म दिया कि परिस्थिति से किसी प्रकार का अनुचित लाभ न उठाया जाय। विशेष रूप से आर्कमिडीज़ का ध्यान रखा जाय। कोई भी उस पर हाथ न उठाये। उसे हर प्रकार की सुविधा और इज्ज़त दी जाय। उस वैज्ञानिक का सम्मान किया जाय। उसे रोमन साम्राज्य का विशेष अतिथि माना जाय।

और इस पागलपन, विनाश-लीला, कुकृत्य और अमानवीय कार्य से बिलकुल अनभिज्ञ आर्कमिडीज शान्त, संतुलित, एकाग्र और खोया-खोया-सा बाजार के पास बैठा था, धरती पर। उसकी अँगुलियाँ धूल पर नाच रही थीं और बार-बार वह एक वृत्त को पूरा करके कुछ हिसाब लगा रहा था, विज्ञान के किसी गूढ़ रहस्य को जानने का प्र-.त्न कर रहा था। किसी और बात का उसे आभास तक न था।

एकाएक आर्कमिडीज़ चौंक पड़ा, किसी की पदचापों से। देखा तो सामने एक रोमन सैनिक चला आ रहा था। लड़खड़ाते पैरों, बेहोश-सा, विक्षिप्त-सा। हाथ में थी उसके नंगी, चमचमाती तलवार।

"मुझे तो मारोगे तुम, सही। लेकिन ठहरो मैं अपना गणित तो पूरा कर लूँ। फिर मार डालना मुझे, सैनिक।" आर्कमिडीज़ बुदबुदाया।

पर वह सैनिक था। कल्पना से उसका कोई वास्ता नहीं था। ऐसी खोखली बातों में उसे कोई तथ्य नज़र नहीं आया। और उसने बिना एक क्षण खोए आर्कमिडीज़ के पेट में तलवार भोंक दी।

"मेरा शरीर तो ले लिया तुमने पर देखो, मैं अपना मस्तिष्क अपने साथ ले जाऊँगा।" मरते-मरते कह गया था वह महान् वैज्ञानिक।

———

वह अभी भी घूमती है !

शान्त-भाव से चर्च के भीतर बहुत से लोग सर झुकाए खड़े हैं। फिर वे घुटनों के बल खड़े हो जाते हैं। सभी ध्यानमग्न हैं और भीतर का वातावरण गम्भीर और सात्विक है। ऐसे में मन और मस्तिष्क में कोई और विचार आ ही नहीं सकते। धार्मिक विचार ही प्रधानतः उस समय सभी व्यक्तियों का पथ-निर्देशन करते हैं। इस झुंड में एक नवयुवक मेडिसिन का भी है। वह भी पिसा के उस चर्च में घुटनों पर झुका है।

उसी समय चर्च का एक कर्मचारी भीतर आकर लम्बी चेन से टँगे तेल के लैम्प को नीचे उतारता है, लैम्प में तेल भरता है, लैम्प ऊपर चढ़ाता है और आगे बढ़ जाता है। लेकिन चेन हिलती रहती है और उसके साथ ही लैम्प भी हिलता-डुलता है। थोड़ी-सी आवाज भी होती है....टिक....टैक ...टिक... टैक....टिक....टैक.... ।

नवयुवक की प्रार्थना में व्यवधान होता है। वह मुड़कर अपनी दृष्टि हिलते लैम्प पर जमा लेता है और फिर विचारों का एक प्रबल प्रवाह उसके दिमाग में बहने लगता है।

वह चौंक पड़ता है अचानक। उसकी आँखों में चमक आ जाती है और प्रसन्नता से भर जाता है। हिसाब लगाया उसने तो पाया कि लैम्प के हिलने-डुलने में एक विशेष सम्बन्ध है। प्रत्येक बार लैम्प के हिलने का समय समान है। यह समय हर बार वही रहता है, जबकि धीरे-धीरे लैम्प के हिलने की दूरी कम होती जाती है।

क्या यह सच है ? या मैं केवल स्वप्न-सा देख रहा हूँ ? यदि

यह वास्तविक है, तो क्या मैंने किसी अत्यंत महत्वपूर्ण तथ्य का पता लगा लिया है ? घर जाकर सही बात का पता लगाना चाहिए। और वह नवयुवक भागा घर की ओर।

घर पहुँचकर उसने एक ही लम्बाई के धागे के दो टुकड़े लिये और इन धागों के छोर में समान वजन के सीसे के टुकड़े बाँध दिए। अपने दादा, मजिओ टेडाल्डी को पास बुलाकर समझाया कि एक धागे को हिलाकर तुम उसके चक्करों का समय गिनो और मैं दूसरे धागे को हिलाकर उतने ही चक्करों का समब गिनता हूँ।

वह बूढ़ा पहले तो मुस्करा दिया, फिर कहना मानकर उसने वैसा ही कर दिया। प्रयोग के पहले नवयुवक ने अपने धागे की लम्बाई चार हाथ और दादा के धागे की लम्बाई दो हाथ रखी। दोनों में चक्कर समान रखे गए। किसी बड़े परिणाम की प्रतीक्षा करके नवयुवक ने दोनों पेंडुलम हिला दिए। सौ बार यहाँ-वहाँ हिल जाने के पश्चात् नवयुवक ने जब समय गिना, तो दोनों दशाओं में समय एक-सा निकला।

इस तरह चर्च के लैम्प के हिलने से आज संसार के पास प्रकृति का एक महत्वपूर्ण और उपयोगी नियम हाथ लग गया है।

इसी किस्म के प्रयोग गैलीलियो गैलिली, जो गैलीलियो से ही अधिक जाना जाता है, अपनी अठहत्तर वर्ष की जिन्दगी में हमेशा करता रहा है।

बचपन से ही उसकी आदत थी कि उसने दूसरों के सूत्रों, प्रयोगों और विधियों की कुछ भी चिंता नहीं की। गैलीलियो प्रयोग करता और परिणाम निकालता। संगीतकार का यह पुत्र बचपन से ही सितारों को घूरता रहता था और पिता की दृष्टि में यह उसकी विचित्र आदत में घुल-मिल गया था। कक्षा में

शिक्षक से व्याकरण या साहित्य पढ़ने की अपेक्षा आकाश के बारे में सोचता, सितारों की दुनिया में खोया रहता, चन्द्रमा को पढ़ने का प्रयास करता।

बारह वर्ष की उम्र में गैलीलियो पढ़ने के लिए स्कूल भेजा गया, पर स्कूल का वातावरण ऐसा था कि कुछ सीखने की जगह वह धार्मिक तथ्यों में रुचि लेने लगा। पता चलने पर उसे उस स्कूल से वापस बुला लिया गया।

इस घटना का गैलीलियो पर प्रभाव नहीं पड़ा। क्योंकि उसके दिल और दिमाग में विज्ञान का गहरा असर था। गणित में दक्षता प्राप्त करने के बाद वह विज्ञान के क्षेत्र में नवीन आविष्कार करने में लग जाना चाहता था। गैलीलियो के पिता की इच्छा थी कि उनका बेटा कपड़े का व्यापारी बने और अच्छा खासा द्रव्य अर्जित करे। बाद में दोनों में एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार उसे मैडिकल स्कूल में भर्ती किया गया।

मैडिकल स्कूल में भर्ती हो जाने के बाद भी गैलीलियो मडिसन की पुस्तकों में आर्कमिडीज़-जैसे वैज्ञानिकों की किताब छिपाए रहता; और गणित और विज्ञान की पढ़ाई के साथ ही वह छोटे-छोटे यंत्र बनाने में व्यस्त रहता। प्रोफेसरों का ज्ञान भी सीमित था और वे सोचते थे कि अरस्तू ने विज्ञान के क्षेत्र में जितना संभव था, सभी कर दिया है, खोज निकाला है। बात-बात में अरस्तू की खोजी और कही गई बातों का उदाहरण देते थे। वे सोचा करते कि उनके उस विद्यार्थी का मस्तिष्क खराब हो गया है, इसीलिए उसे व्यर्थ की बातों से दूर रखने के लिए उसके पिता को सूचित किया गया। गैलीलियो के पिता ने पुत्र को सलाह दी कि अध्यापकों की सलाह पर अमल किया जाना चाहिए।

पर गैलीलियो ने हार मानने या अपने प्रयोग बन्द कर देने से इनकार कर दिया।

नाराज होकर अध्यापकों ने गैलीलियो को मैडिकल का डिप्लोमा देने में असमर्थता प्रकट की। गैलीलियो को अंततः मैडिकल संस्था छोड़नी पड़ी। इस अवधि में गैलीलियो ने अपना प्रभुत्व इटली के कुछ प्रसिद्ध गणितज्ञों पर जमा लिया था और वे उसे "आधुनिक आर्कमिडीज़" भी कहने लगे थे।

पढ़ाई समाप्त करने के उपरांत गैलीलियो को पिसा विश्व-विद्यालय में गणित पढ़ाने के लिए नियुक्त किया गया। एक तो वह जगह खाली थी, दूसरे गैलीलियो पढ़-लिखकर पैसा कमाना चाहता था जिससे जीवन की गाड़ी कुछ आगे तो बढ़ सके। इस पद पर कार्य करने के बाद भी उसे बहुत कम आमदनी हो पाती थी, जीवन-निर्वाह के लिए भी कम पड़ने वाली।

गैलीलियो हारे नहीं इन मुसीबतों से। वे अरस्तू या और किसी वैज्ञानिक के फार्मूले या आविष्कार पर आस्था नहीं रखते थे। खुद प्रयोगों को करके देखते और तब उन पर विश्वास किया करते। उनकी इस आदत ने बहुत-से शत्रु बना लिए। कक्षा में पढ़ाते तो विद्यार्थी व्यंग्यभरी-हँसी हँसते और साथी प्रोफेसर उनकी बुराई करते न थकते। अरस्तू द्वारा समझाये और लिखे गये सिद्धान्तों को वे सही मानते थे और उन सिद्धान्तों पर किसी भी प्रकार की टिप्पणी सहन नहीं कर सकते थे। ये टिप्पणी भी अरस्तू की व्याख्याओं का खंडन होती थीं। साथी प्रोफेसरों ने कई बार गैलीलियो को चेतावनी दी कि वे अरस्तू के सिद्धान्तों का खंडन करना बन्द करें और

यदि वे ऐसा न करेंगे तो उन्हें बहुत बड़े विरोध का सामना करना पड़ेगा। पर गैलीलियो तनिक भी विचलित नहीं हुए।

वे कहा करते थे कि यदि एक ऊँचे स्थान से एक साथ भारी और हलकी वस्तुएँ गिराई जाएँ, तो दोनों असमान भार की वस्तुएँ धरती पर एक साथ गिरेंगी। इस कथन को साथी प्रोफेसरों द्वारा चुनौती के रूप में स्वीकार किया गया। गैलीलियो से कहा गया कि वे विश्वविद्यालय के शिक्षकों और विद्यार्थियों की उपस्थिति में रोम की जनता के सामने प्रयोग द्वारा अपने कथन की पुष्टि करें। हँस कर गैलीलियों ने चुनौती स्वीकार कर ली। स्थान और समय नियत कर लिए गए। पिसा की मीनार प्रयोग के लिए चुनी गई।

"झुकी हुई पिसा की मीनार", रंग-बिरंगे कपड़ों में सजे विश्वविद्यालय के विद्यार्थी, मखमल के चोंगों में गम्भीर मुद्रा लिए प्रोफेसर, शोरगुल करते हुए नागरिक, चारों तरफ आश्चर्यचकित आँखों के सैकड़ों जोड़े, उत्सुकतापूर्ण वातावरण—। आज तक अरस्तू के कहे गए को पत्थर की लकीर माना गया था। किसी ने उसके सिद्धान्तों को प्रयोग की कसौटी पर कसने की बात तक न सोची थी। पंख और एक बड़ा ठोस गोला—एक साथ गिरगे ? अविश्वसनीय, सरासर झूठ ! आज गैलीलियो की इज्जत धूल में मिलेगी। सब लोग इस नतीजे की साँस रोककर प्रतीक्षा कर रहे थे। आज गैलीलियो का गर्व चूर होगा, उसका मस्तक शर्म से झुक जावेगा। अपनी गलती और हिमाकत की उसे अच्छी कीमत चुकानी पड़ेगी।

नियत समय पर चेहरे पर विश्वास और संतोष के भाव लिये गैलीलियो मीनार के पास आ खड़ा हुआ। सभी की साँस रुक-सी गई। गैलीलियो न तो चिनित दिखाई पड़ता था, न उसके हाव-

भाव से किसी असंतोष को झलक मिलती थी। गैलीलियो के एक हाथ में दस पौंड का और दूसरे हाथ में एक पौंड का गोला था, ठोस, चमकदार गोले। गोलों को हाथों में लिये वह मीनार पर चढ़ने लगा तो चारों तरफ हल्का-सा शोरगुल फैल गया। कुछ लोग कुटिल हँसी हँस पड़े। धीरे-धीरे चढ़कर वह ऊपर पहुँचा। ऊपर पहुँच कर एक बार फिर गैलीलियो ने मानों मूकभाव से चुनौती स्वीकार करने के लिए विश्वास के साथ उपस्थित जन-समूह पर एक सरसरी निगाह डाली। पिसा की झुकी हुई मीनार के किनारे दोनों गोले रखकर उसने धीरे-से उन गोलों को धक्का देकर गिरा दिया।

पलक मारते दोनों गोले एक साथ, एक समय धरती पर खट् से गिरे।

लोगों की ज़बान कों मानो लकवा मार गया हो। कोई भी एक शब्द न बोल सका। उनकी साँस जहाँ-की-तहाँ रुक-सी गई। आँखें क्षण भर के लिए फटी-सी रह गयीं।

गलीलियो ने महान् वैज्ञानिक अरस्तू के कथन को झूठा साबित कर दिया। इतना बड़ा साहस ! विश्वास दिला दिया !

विश्वास न करने का मन हो रहा था, लेकिन अविश्वास को स्थान ही नहीं रह गया था।

इतने पर भी शेष प्रोफेसरों के मन में गैलीलियो के प्रति बड़ी तीखी घृणा और विरक्ति थी। विश्वविद्यालय के अधिकारी उस दिन की राह देखने लगे जब वे किसी-न-किसी दोषारोपण के आधार पर गैलीलियो-जैसे द्रोही और विकृत विचारों वाले प्रोफेसर को पदच्युत कर सकें। और उन्हें इसका मौका भी मिल गया। वहीं के राजकुमार ने एक मशीन तैयार करके गैलीलियो की सम्मति के लिए भेजी। गैलीलियो ने कहा कि

मशीन तो ठीक है, पर उससे काम करना असम्भव है। अब क्या था। इस पर उसे अलग कर दिया गया।

गैलीलियो को पिसा से हटने की कोई कीमत नहीं चुकानी पड़ी क्योंकि शीघ्र ही पैडुआ विश्वविद्यालय में उसे नियुक्त कर लिया गया। वेतन भी पहले से ज्यादा था और काम करने की भी आजादी थी।

यहाँ आकर उसे चैन मिला और मुक्त वातावरण ने उसे उत्साहित किया। अब वह अपनी खोजों में व्यस्त हो गया। हर समय वह विद्यार्थियों से घिरा रहता। अपनी पैनी दृष्टि के बल पर गैलीलियो सैनिक-शिक्षा तक दे सकता था। फल-स्वरूप उसके पास बहुत से लोग शिक्षा लेने आते। उनमें से कुछ सैनिक, कुछ सेना के उच्च-अधिकारी, कुछ राजनीतिज्ञ बनने आते थे।

अधिकांश समय गैलीलियो इन्हीं लोगों से घिरा रहता। कभी-कभी वह ऊबता भी और ऐसे समय वह शहर के मनो-रंजक कार्यों में, उत्सवों में उत्साहपूर्वक भाग लेता, नृत्य करता, नाटक रचता और खेलता। ये परिवर्तन उसे मानसिक और शारीरिक शांति प्रदान करते थे।

गैलीलियो की सफलता की कहानी ने उसकी ख्याति चारों ओर फला दी थी। उसने, खोज में रुचि रखने वाले स्नातकों के लिए एक नई संस्था की स्थापना की। उसमें बहुत-से विद्यार्थी और शिक्षा-शास्त्री सम्मिलित हो गए।

इन्हीं के बीच रहते हुए गैलीलियो ने अनेक महत्वपूर्ण यंत्रों का आविष्कार किया। थर्मामीटर, टैलिस्कोप, कम्पास—इसी समय बने।

टैलिस्कोप बनाने के लिए गैलीलियो ने सदैव एक डच निवासी का आभार माना था। उन्होंने सुन रखा था कि उसने

लैंसों को इस ढंग से जमाया था कि उसकी सहायता से दूर की चीजों को पास देखा जा सकता था। इस घटना के सहारे गैलीलियो ने कुछ अच्छे लैंसों को इकट्ठा किया और गणित के सूत्रों को लगाकर ऐसा टैलिस्कोप बनाया, जिसे प्रथम वैज्ञानिक टैलिस्कोप कहा जा सकता था। टैलिस्कोप अर्थात् दूर दर्शक यंत्र का प्रथम प्रदर्शन भी गैलीलियो द्वारा किया गया था, जनता के सामने। वैनिस में एक ऊँचे स्थान पर उसने वह टैलिस्कोप लगाया और सबने एक-एक कर दूर चरते हुए जानवर, चर्च जाते लोग, दूर के मकान देखे और आश्चर्य से दंग रह गए। रात में लोगों ने तारों और चाँद को अपने पास देखा। इसके पूर्व कभी किसी ने सितारों को इतने नजदीक से नहीं देखा था, इतना ताज्जुब नहीं किया था।

गैलीलियो के बनाए उस प्रथम दूरदर्शक यंत्र को खरीदने के लिए सैकड़ों लोग लालायित थे। सभी अच्छी खासी रकम देने को तैयार थे। पर वह वैज्ञानिक इन सबसे तनिक भी प्रभावित नहीं हुआ और वह प्रथम टैलिस्कोप वैनिस के ड्यूक को भेंट कर दिया गया। ड्यूक ने इस पर खुश होकर गैलीलियो को पैडुआ विश्वविद्यालय में गणित के प्रोफेसर पद पर नियुक्ति कर दी।

गैलीलियो इस पद से संतुष्ट नहीं थे और वे वापस पिसा जाना चाहते थे।

पिसा विश्वविद्यालय में तो वे नियुक्त नहीं हुए, पर फ़्लोरेंस के ड्यूक ने उन्हें अपने दरबारी के रूप में स्वीकार कर लिया। यहीं से उस महान् वैज्ञानिक के जीवन की सबसे बड़ी ट्रेजेडी प्रारम्भ होती है।

गैलीलियो ने अपने टैलिस्कोप से आकाश की दुनिया का जो वास्तविक अध्ययन किया था, उसी को एक किताब का रूप

दे दिया था। किताब का नाम था "सिडेरस ननसियस" अर्थात् "तारों का दूत"। इस पुस्तक में कहा गया था कि आकाश में कई ग्रह उपस्थित हैं, असंख्य तारे हैं, आकाश-गंगा है। चार ग्रहों के तो नाम तक गिनाए गए थे। पृथ्वी के सम्बन्ध में वे एक बिलकुल नई धारणा मानने लगे थे। उनका मत था कि पृथ्वी, सूर्य के चारों ओर घूमती है और सूर्य स्थिर है। पर वे ऐसा अपनी पुस्तक में नहीं लिख सके। उन्होंने अपने मित्रों से ही कहकर संतोष कर लिया।

चर्चा तो इस घटना की सभी ओर होती थी। उन्हें कॉपर-निकस का अनुयायी माना गया और दंड दिया गया। चेतावनी देकर, उनसे भविष्य में इस तरह की बातें न कहने का आश्वा-सन ले लिया गया।

वे पुनः वैज्ञानिक खोजों में जुट गए। दिन-रात एक करके कई नई उपलब्धियाँ प्राप्त कीं। इन आविष्कारों में यह भी था कि सूर्य स्थिर है और हमारी पृथ्वी, सूर्य का चक्कर लगाती है।

ऐसा कहना उन दिनों आज जैसा सरल न था। जनता और शासक धर्मांध थे। धर्म के विरुद्ध जाने का किसी में साहस न था, फिर चाहे वह महान् वैज्ञानिक ही क्यों न हो।

खोज तो सही थी और इसे प्रकट करना मुश्किल था। गैलीलियो ने एक नई पुस्तक लिखी और उस पस्तक में सूर्य के चारों ओर पृथ्वी का चक्कर लगाना भी विस्तारपूर्वक लिखा गया।

यह धार्मिक विश्वास के विपरीत था। धार्मिक विश्वास तो यह था कि पृथ्वी स्थिर है और सूर्य घूमता है। गैलीलियो ने चर्च की सत्ता को चुनौती दी थी। वह धर्म-विरुद्ध बात करता था।

बस क्या था ! आग लग गई। विरोध की आवाज तेज होती गई और इसे एक अक्षम्य अपराध, राज्य की ओर से घोषित कर दिया गया।

इस अपराध का दंड केवल एक ही हो सकता था, मृत्युदंड। उसे रोम आने के लिए कहा गया, समन भेजा गया। गैलीलियो बीमार था और उसकी दशा ऐसी थी कि वह रोम किसी भी प्रकार से नहीं जा सकता था। शारीरिक और मानसिक स्थितियाँ इस यात्रा के लिए अनुकूल कदापि नहीं थीं। पर इस समन से किसी भी रीति से बचना मुश्किल था।

डाक्टर ने सार्टीफिकेट दिया—"गैलीलियो बिस्तर पर पड़ा है। रोम जाने का मतलब होगा उसकी निश्चित मृत्यु।"

इन बातों का, डाक्टरी मत का धर्मान्ध लोगों पर कोई असर नहीं पड़ा। एक तो कड़ाके की सर्दी, दूसरे रोम जाने का मार्ग अत्यन्त दुखदायी। और सबसे अधिक महत्वपूर्ण यह तथ्य कि गैलीलियो अत्यंत वृद्ध। साक्षात् मौत मानो बुला रही थी। इस निमंत्रण को पूरा करने की किसमें हिम्मत, किसमें उत्सुकता हो सकती थी। रोम जाने के लिए उन दिनों पुराने ढंग की खच्चर-गाड़ियाँ रहा करती थीं। धीरे-धीरे, ऊबड़-खाबड़ सड़क पर घंटों का सफर।

जिसने सुना उसने माथा ठोक लिया। कानून के ठेकेदारों को कोसा, धर्म के नाम पर होने वाले इस अत्याचार, पाप के प्रति घृणा दर्शाई। गैलीलियो के लिए सहानुभूति सबके मन में थी। इस कठोरता पर पत्थर का मन भी पिघल जाए।

वृद्ध गैलीलियो गाड़ी में बैठकर एक कड़ाके की सुबह रवाना हुआ। रास्ते भर उसके प्राण संकट में रहे। दम अब निकले या तब। जैसे-तैसे रोम आया।

रोम में उस पर मुकदमा चला। मुकदमा लगभग छः माह

तक चला। उस पर बाइबिल, धर्म और पुरातन परम्पराओं के विरोध में जाने का आरोप लगाया गया। आज तक सिवा उसके किसी ने साहस का प्रदर्शन नहीं किया कि धर्म में कही गई बातों के विरोध में जा सके।

उसे मजबूर किया गया कि वह सब के सामने स्वीकार करे कि जो उसने लिखा है, दुर्भावनावश और गलत लिखा है। बाइबिल या धार्मिक विश्वास वास्तव में सही है। सूर्य ही धरती का, हमारी जगती का चक्कर लगाता है। पृथ्वी स्थिर है। यह सब वह दुहराए।

गैलीलियो खून के आँसू रो पड़ा। वृद्धावस्था में भी इतनी बेइज्जती होगी, इतने मानसिक और शारीरिक कष्टों में से उसे गुजरना पड़ेगा, सही तथ्यों का खंडन करना पड़ेगा, अपने स्वतंत्र सच्चे विचार व्यक्त करने पर पाबंदी लगेगी, इसकी उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

कोई अन्य उपाय भी सामने नज़र नहीं आता था।

विशाल जन समूह के समक्ष उसे घुटनों खड़ा रहना पड़ा। उसने यह भी किया। फिर धर्म में निहित वे बातें भी उसने दुहराईं, जो वे लोग चाहते थे।

अपने कुछ साथियों के साथ गैलीलियो बाहर आया। कहा जाता है, बाहर आते ही वह बोल उठा था—"लेकिन सच तो यह है कि सूर्य स्थिर है, हमारी पवित्र धरती माता ही सूर्य का निरंतर चक्कर लगा रही है।"

गैलीलियो की गतिविधियों पर प्रतिबंध लगा दिया गया था। उसे न तो किसी वैज्ञानिक प्रयोग करने की इजाजत थी और न कुछ लिखने की। फिर भी "आरसेट्री" के जेल में कैदी बने गैलीलियो ने एक पुस्तक की पाँडुलिपि तैयार करके, चुपके-चुपके उसे ट्राकैंड भिजवा दिया।

तक चला। उस पर बाइबिल, धर्म और पुरातन परम्पराओं के विरोध में जाने का आरोप लगाया गया। आज तक सिवा उसके किसी ने साहस का प्रदर्शन नहीं किया कि धर्म में कही गई बातों के विरोध में जा सके।

उसे मजबूर किया गया कि वह सब के सामने स्वीकार करे कि जो उसने लिखा है, दुर्भावनावश और गलत लिखा है। बाइबिल या धार्मिक विश्वास वास्तव में सही है। सूर्य ही धरती का, हमारी जगती का चक्कर लगाता है। पृथ्वी स्थिर है। यह सब वह दुहराए।

गैलीलियो खून के आँसू रो पड़ा। वृद्धावस्था में भी इतनी बेइज्जती होगी, इतने मानसिक और शारीरिक कष्टों में से उसे गुजरना पड़ेगा, सही तथ्यों का खंडन करना पड़ेगा, अपने स्वतंत्र सच्चे विचार व्यक्त करने पर पाबंदी लगेगी, इसकी उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

कोई अन्य उपाय भी सामने नज़र नहीं आता था।

विशाल जन समूह के समक्ष उसे घुटनों खड़ा रहना पड़ा। उसने यह भी किया। फिर धर्म में निहित वे बातें भी उसने दुहराईं, जो वे लोग चाहते थे।

अपने कुछ साथियों के साथ गैलीलियो बाहर आया। कहा जाता है, बाहर आते ही वह बोल उठा था—"लेकिन सच तो यह है कि सूर्य स्थिर है, हमारी पवित्र धरती माता ही सूर्य का निरंतर चक्कर लगा रही है।"

गैलीलियो की गतिविधियों पर प्रतिबंध लगा दिया गया था। उसे न तो किसी वैज्ञानिक प्रयोग करने की इजाजत थी और न कुछ लिखने की। फिर भी "आरसेट्री" के जेल में कैदी बने गैलीलियो ने एक पुस्तक की पाँडुलिपि तैयार करके, चुपके-चुपके उसे ट्राकैंड भिजवा दिया।

जेल में गैलीलियो की दृष्टि चली गई थी। उस छपी पुस्तक को भी वह देख न सका।

हाँ, मृत्यु-शय्या पर लेटे-लेटे उसने अपने हाथों से वह छपी पुस्तक सहला ली, इतना सुख, उसे प्राप्त हो गया। पुस्तक को स्पर्श करने का सुख, सोभाग्य।

"मेरी पीड़ा का फल है यह पुस्तक, सबसे अधिक मैं इसे प्यार करता हूँ" मरते हुए गैलीलियो ने गुनगुनाया था।

—०—

भाप की कथा

'घर-घर घर्र-घर्र छक-छक-छक-छक' करता हुआ रेल का एंजिन दौड़ता प्लेटफार्म की ओर चला आ रहा है। एंजिन के पीछे आठ-दस और डिब्बे हैं, जिनमें यात्री बैठे हुए हैं। कोई कहीं की यात्रा कर रहा है, कोई कहीं की। प्लेटफार्म पर गाड़ी रुकी कि जनसमूह एकदम उमड़ पड़ा। चारों तरफ भीड़ ही भीड़। जन-समूह इतना कि यात्रियों का बैठना उतरना मुश्किल। सामने एंजिन खड़ा सी-सी, घी-घी, धुक-धुक की लम्बी आवाजें कर रहा है। मैंने मित्र से कहा कि यह 'सी-सी' की आवाज क्यों आ रही है, उसने बताया कि यह 'सेफ्टी वाल्व' है। जिसके द्वारा अतिरिक्त भाप बाहर फेंकी जा रही है। मेरी जिज्ञासा बढ़ी और मैंने और भी प्रश्न करना प्रारम्भ कर दिये !

"भाप कैसे बनती है ?" मैंने कहा।

'पानी को जब गर्मी मिलती है, तब वह भाप के रूप में ऊपर उड़ने लगता है। पानी का वाष्पीकरण भाप के द्वारा ही होता है।' मेरे मित्र ने उत्तर दिया।

'एंजिन कैसे चलता है ?' मैंने पूछा

'भाप की सहायता से !' मित्र का उत्तर था।

इस वाक्य को कहते-कहते वह रुकने-सा लगा। मैंने अधिक अधीर होकर उससे पूर्ण बात बतलाने का आग्रह किया। मेरे मित्र ने कहा कि इस प्रकार के एंजिन तथा भाप से चलने वाले अन्य यंत्रों को देखते ही मुझे एक वैज्ञानिक का चित्र इस भाप की ऊपरी सतह पर तैरता दिखलाई देता है ! क्या तुम उस

वैज्ञानिक को जानते हो ? मित्र के इस प्रश्न से अनभिज्ञता प्रकट कर मैंने इसका उत्तर चाहा। मेरे मित्र ने कहा कि उस वैज्ञानिक का नाम 'जेम्स वॉट्' था। जेम्स वॉट् ने इस भाप के चत्मकार का आविष्कार कैसे किया इसकी कहानी विचित्र है।

प्रथम शताब्दी में ही इस भाप के उपयोग का सूत्रपात हो गया था। ईसा के पूर्व एक दार्शनिक हो गया है। उसका नाम 'हीरो' था। हीरो ग्रीक दार्शनिक था। वह अलेकजेण्डरिया में रहता था। उसने एक विशेष प्रकार के खिलौने देखे और उनके माध्यम से इस प्रकार के एंजिन की कल्पना की थी। इस खिलौने को वह 'इयोलस' कहा करता था। यह खिलौना धातु का एक गोला था और यह गोला नीचे भरे हुए पानी का वाष्पीकरण करता था। उस 'इयोलस' में हलचल होती थी। वह भाप के वेग के कारण चलने लगता था। यह खिलौना ही वास्तव में एंजिन की प्रथम कल्पना थी। इस युग के पश्चात् यह वैज्ञानिक सत्य प्रायः सुषुप्त रहा किन्तु सोलहवीं शताब्दी में इसका विस्तृत रूप दिखलाई दिया और वह रूप इटली में जहाज के रूप में दिखा। इसके बाद तो पूरे योरोप में इसके अनेक प्रयोग किये जाने लगे थे। अनेक नलियों में भाप को भरकर उसकी शक्ति का माप किया जाता था और पानी की सतह पर कोई हल्की वस्तु को डालकर उस वस्तु की भाप के कारण उठने की क्रिया का वैज्ञानिक निरीक्षण किया जाता था।

इसी प्रयोग के आधार पर सर्वप्रथम 'साल्योमन डी कॉस' ने भाप की शक्ति का वास्तविक परीक्षण किया। उसने एक खोखला गोला लेकर उसमें दो नलियाँ लगा दीं। एक नली पानी में डबी रहती थी और वाष्प की नली में पानी भरती जाती थी और दूसरी नली गोले में वाष्प इकट्ठा करती थी। इस प्रकार भाप की शक्ति के एकलीकरण की क्रिया का परीक्षण इस वैज्ञानिक

ने किया था। नली के वाष्प और पानी को खींचने की इस क्रिया का प्रयोग खदानों में अधिक किया जाने लगा और इसी आधार पर इस परीक्षण की उपयोगिता सिद्ध हुई।

इसके पश्चात् एक और वैज्ञानिक निरीक्षण किया गया। यह निरीक्षण सॉवेरी ने किया था। सॉवेरी ने एक बोतल ली। उसने उस बोतल को आग में फेंक दिया। उस बोतल में शराब भरी थी किन्तु फंकने के पूर्व उसे खाली कर लिया गया था। उसने देखा कि जब बोतल गरम हुई तो जो शराब की बूँद इस बोतल में शेष रह गई थीं वे वाष्प का रूप धारण करने लगीं। इस वाष्पीकरण की क्रिया ने उस व्यक्ति को चमत्कृत कर दिया। इसके पश्चात् उसने एक नली लगाकर बोतल डाली और अंत में उसने देखा कि वाष्प उस नली के द्वारा, नली के मुख की ओर चली आ रही है। भाप को एकत्रित करते हुए उसने यह भी देखा कि उस वाष्प का रूपान्तरण भी पानी के ही रूप में हो गया है। इससे उसने वाष्प के रूपान्तरण की कल्पना की और इसके साथ ही उसने वाष्प की शक्ति का प्रयोग भी किया। भाप से चलने वाला उसने एक पम्प बनाया।

वाष्प के इस प्रकार के उपयोग करने की प्रक्रिया तो चल ही पड़ी थी। सन् १६६३ से १७२९ के बीच 'थॉमस न्यूकॉमेन' ने इस वाष्प का विस्तृत प्रयोग किया। उसने कुछ ऐसे यंत्रों का निर्माण भी किया जिनका संचालन-भाप के द्वारा होता था। इसी मशीन की सहायता से दूसरी अन्य मशीनों के संचालन हेतु भी उसने प्रयोग किये और अंत में एक मशीन की सहायता से अन्य मशीनें भी चलने लगीं। भाप से मशीन के संचालन के लिए उसने एक ऐसी वस्तु चुनी जिसमें पानी उबलता रहता था और उससे भाप नलियों के द्वारा एकत्रित होकर यंत्र को संचालित करती थी। एक यंत्र दूसरी मशीन को संचालित करता था। इस प्रकार एक

के बाद दूसरी मशीनें भी संचालित होती चलती थी। आग को प्रज्ज्वलित रखने के लिए कोयले का प्रयोग किया जाता था। इसी आधार पर वाष्प से चलने वाली मशीनों का आविष्कार हुआ। मोटरें तथा अन्य यंत्र भी इसी के द्‌वारा चलने लगे। 'थामस न्यूकॉमेन' के इस कार्य की ख्याति तो हुई किन्तु उतनी मात्रा में नहीं, जितनी मात्रा में जेम्स वॉट्‌ को मिली।

'जेम्स वॉट्‌' ने भाप से चलने वाले एंजिन का ही आविष्कार किया। जेम्स वॉट्‌ के पूर्व जिन मशीनों का प्रयोग किया जाता था, उन मशीनों में काफी अपूर्णता थी। नलियों के द्‌वारा वाष्प एकत्रित की जाती थी और उसके पश्चात्‌ उसका एकत्रीकरण कर उसे मार्गान्तरीकृत करते हुए मशीन का संचालन होता था। इससे असुविधा यह होती थी कि एक ही स्थान पर रखे 'बॉयलर' के द्‌वारा मशीन को संचालित किया जा सकता था। 'बॉयलर' का स्थानांतरण संभव न था। ऐसी स्थिति में इस परीक्षण की पूर्ण उपयोगिता सिद्‌ध नहीं हो सकी थी। जेम्स वॉट्‌ ने वाष्प से चलने वाले एंजिन का ही निर्माण कर दिया। वाष्प को स्थानान्तरित किया जाने लगा। इस क्रिया में ऐसे 'बॉयलर' की आवश्यकता ही न पड़ती थी जो एक ही स्थान पर रखा रहकर भाप का निर्माण करे। भाप से चलने वाले एंजिन में ही 'बॉयलर' की व्यवस्था रहती थी और इस प्रकार भाप तैयार होती रहती थी और उसी के माध्यम से एंजिन चलता भी जाता था। भाप से चलने वाले ऐंजिन का निर्माण करने वाला विशेषज्ञ जेम्स वॉट्‌ ही माना जाता है।

इस पूरे विवरण को सुनकर मेरे मन में अनेक प्रकार की जिज्ञासाएँ आ गईं। जेम्स वॉट्‌ ने इस प्रकार के एंजिन की कल्पना कैसे कर ली ? क्या वह आरम्भ से ही इस प्रकार के एंजिन

बनाने में लगा था ? मेरी इस बात को सुनकर मेरा मित्र हँसने लगा। मैंने कहा कि मुझे उस घटना का संकेत करो जिससे कि जेम्स वॉट् की जीवन रेखा भी स्पष्ट हो सके और इसके साथ ही यह भी जान सकूँ कि जेम्स वॉट् के मन में भाप से चलने वाले एंजिन की कल्पना कैसे आई।

मेरी जिज्ञासा को शान्त करने के लिए मेरे मित्र ने कहना प्रारंभ किया—"जेम्स वॉट् प्रारंभ में मंद बुद्धि का बालक था। उसकी शिक्षिका उसकी भर्त्सना किया करती थी। वह कहा करती थी कि मैंने ऐसा निष्क्रिय और निश्चेष्ट बालक देखा ही नहीं। कक्षा में वह एक शब्द भी नहीं बोलता था। वह चाय भरा कप लेकर उससे निकलने वाली—भाप को देखता था और कभी-कभी चम्मच को उस भाप के ऊपर औंधा रख देता था। भाप जब उस चम्मच से टकराती थी तो उसका रूपान्तरीकरण हो जाता था और वह वाष्प पानी के रूप में परिवर्तित हो जाती थी। वह देखता रहता था कि चम्मच में बूँदों का जमाव किस प्रकार होता है। पानी का रूप कैसे बनता है ? रूपान्तरण के उपरान्त पानी की कितनी बूँदें कप में गिरती हैं ? इसे ही वह घंटों देखता रहता था। बूँदों की गिनती करते-करते उसका शाला का जीवन बीत गया।

आगे चलकर उसने तकनीकी अध्ययन प्रारंभ किया। वाष्पीकरण की ओर उसका ध्यान तब भी बना रहा और अंत में उसने भाप से चलने वाले एंजिन का निर्माण किया।

जेम्स वॉट् की अनुसन्धान वृत्ति अधिक जागरूक रही। एक बार उसकी ही प्रयोग शाला का एक एंजिन टूट गया। यह एंजिन 'न्यूकॉमेन' के सिद्धान्तों पर चलता था। जेम्स वाट् ने इसको सुधारा किन्तु वह एंजिन अधिक समय तक चल नहीं

सका। उसने अन्य लोगों से मंत्रणा की और फिर उसका प्रयोग किया। प्रयोग सफल रहा।

अभी तक जेम्स वाट् ने ऐसी कोई खोज नहीं की थी जिसके द्वारा उसे विश्व भर में प्रसिद्धि मिल सके। वह उत्साही तो था ही। इसके साथ ही अनुसंधान की किया में प्रवीण भी था किन्तु उसकी प्रवीणता अभी तक कोई ऐसी वस्तु उत्पन्न न कर पाई थी जिसके द्वारा भाप का पूरा प्रयोग हो सके।

एक दिन सुबह की बात है, जेम्स वॉट् चर्च से लौट रहा था। उसने एक छोटा बॉयलर देखा जो भाप बनाने की किया कर रहा था। उसके आधार पर ही एक एंजिन भी चल रहा था। एंजिन छोटा था। बॉयलर से निकलने वाली अतिरिक्त वाष्प निरुपयोगी होकर निकली जा रही थी। तभी उसके मन में यह विचार आया कि वह एक ऐसा एंजिन बनाये जिसमें पूरी वाष्प का प्रयोग किया जा सके। अंत में अनेक प्रकार के प्रयोग करते हुए उसने एक ऐसा एंजिन बना डाला जो सरलता पूर्वक चल सकता था और उस एंजिन को स्थानांतरित भी किया जा सकता था। किन्तु इस समय तक वाष्प का पूर्ण उपयोग नहीं हो पाता था। आगे चलकर जेम्स वाट् ने ऐसे एंजिन बनाये जो चलते थे और अन्य यंत्रों को वाष्प की सहायता से स्वयं-चालित होकर चालित भी करते थे।

जेम्स वॉट् के इस प्रकार के एंजिनों का प्रसार अधिक हुआ और मिल तथा कारखानों में इस प्रकार के एंजिनों से कार्य किया जाने लगा। उसने अंत में एक और मशीन बनाई जिसका नाम 'कापीइंग स्कल्प्चर' था। इस प्रकार आविष्कारों का उपयोग औद्योगिक केन्द्रों में अधिक हुआ। आज जितना भी औद्योगीकरण दिखलाई देता है, वह मशीन की क्षमता पर आधारित है

इसके साथ मशीनों की सहायता से अधिक उत्पादन हो सका है। औद्योगिक मशीनों के आविष्कार करते-करते जेम्स वॉट् की आयु तिरासी वर्ष की हो गई और सन् १८१९ में उसकी मृत्यु हो गई। किन्तु जेम्स वॉट् की स्मृति किसी भी एंजिन को देखकर हो आती है।

—०—

विलियम हॉर्वे

अस्पताल में तो चौबीसों घंटे मायूसी छायी रहती है। उल्लास तो नजर आता ही नहीं। मैं जिस दिन अस्पताल गया उस दिन तो मायूसी और भी अधिक घनी हो गई थी। मैं 'आपरेशन थियेटर' की ओर गया। पंन्द्रह बीस आदमी थे। कुछ बैठे थे, कुछ चहलकदमी कर रहे थे। सभी एक दूसरे से परिचित किन्तु बातचीत में वैसे ही अपरिचित। तभी एक डॉक्टर आया। किसी ने डॉ० से पूछा—'क्या आपरेशन हो गया ?' डॉक्टर ने कहा—'हाँ।' और अपने बाल सहलाता चला गया। कुछ देर बाद एक स्ट्रेचर पर एक व्यक्ति को लाया गया। मैंने अन्य लोगों से पूछा आपरेशन काहे का था। लोगों ने बड़े आश्चर्य के साथ कहा कि इनका एक फेफड़ा ही निकाल दिया गया है।

फेफड़े का नाम सुनते ही मुझे रक्त परिभ्रमण संस्थान की सारी प्रक्रिया याद आ गई। रक्त परिभ्रमण भी पृथ्वी परिभ्रमण जैसा ही है। वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि पृथ्वी गोल है। आप किसी भी स्थान से पृथ्वी की परिक्रमा करने के लिए चलें, अंत में आप वापिस अपने पूर्व स्थान पर ही पहुँचेंगे। इसी प्रकार शरीर का अशुद्ध रक्त फेफड़ों में जाता है फिर हृदय में, फिर अन्य नलियों के द्वारा पूरे शरीर में। अशुद्ध होने पर शुद्धीकरण की फिर वही क्रिया। तात्पर्य यह है कि रक्त का शुद्धीकरण तो हृदय और फेफड़ों में होता है किन्तु परिभ्रमण ठीक एक स्थान से प्रारंभ हो कर अंत में रक्त पुनः उसी स्थान पर शुद्धीकरण के लिए लौटता है। इस वैज्ञानिक

चमत्कार के विषय में पूर्ण रूप से अनुसन्धान करने वाला वैज्ञानिक 'विलियम हार्वे' था।

हार्वे ने 'रक्त परिभ्रमण चक्र' के विषय में खोज कर चिकित्सा विज्ञान को एक नई दिशा दी थी। जब विलियम हार्वे सेन्टबरी के किंग्स स्कूल में पढ़ता था, उस समय कौन अध्यापक यह जानता रहा होगा कि यह बालक इतना बड़ा वैज्ञानिक होगा जिससे औषधि-विज्ञान में एक नया ही युग जुड़ जायेगा।

शरीर विज्ञान के इस महान् वैज्ञानिक का जन्म १ अप्रैल १५७८ में फॉक्स्टोन में हुआ था। इनके पिता एक सौदागर थे। व्यापारी होने के कारण उनके पास धन राशि तो थी ही। विलियम हार्वे को अध्ययन के लिए सर्व प्रथम सेंटबरी की 'किंग्स स्कूल' नामक संस्था में भेजा गया। इसके पश्चात् विलियम हार्वे केम्ब्रिज गये और वहाँ उच्च अध्ययन करने लगे। केम्ब्रिज में मेडिकल साइन्स के विषय का विलियम हार्वे ने गहनतम अध्ययन किया और अंत में उनका अधिकार शरीर-विज्ञान पर हो गया।

सन् १५९७ में विलियम हार्वे ने पाड्वा की यात्रा की। यह केन्द्र उस विश्वविद्यालय का सर्वश्रेष्ठ शिक्षण केन्द्र था जहाँ औषधि-विज्ञान की शिक्षा दी जाती थी। वहाँ जाकर जब विलियम हार्वे ने वहाँ की प्रयोगशाला देखी तो उनका ध्यान शरीर की अन्य विधाओं की ओर भी गया। नाड़ी संस्थान का अध्ययन, अवलोकन और परीक्षण करते-करते उन्हें नई सूझ आ गई और वे अपने नये अनुसंधान में जुट गये। इस संस्था से उन्होंने डॉक्टर की उपाधि प्राप्त की और फिर केम्ब्रिज लौट आये। लन्दन में प्रेक्टिस करने लगे।

सन् १६०९ में विलियम हार्वे को वार्थोलोम्यू अस्पताल का शल्य-चिकित्सक नियुक्त किया गया। अब तो

उन्हें अपने प्रयोग करने के और अवसर मिलने लगे। अपना सारा अर्जित ज्ञान और सारा समय वे शल्य चिकित्सा की नई खोजों में ही लगाने लगे।

विलियम हार्वे जब अस्पताल में बैठते थे तब उस समय का दृश्य अत्यंत विचित्र होता था। एक टेबिल पर विलियम हार्वे बैठते थे। उनके सामने सभी मरीज़ बैठे रहते थे। वे उनकी जाँच तो करते ही थे, इसके साथ ही उनके शरीर की ओर देखा करते थे। यदि उन्हें कुछ रहस्य दिखलाई देता था तो वे उस रहस्य के उद्घाटन के लिए बेचैन हो उठते थे। मरीज़ों को उनसे अधिक सान्त्वना मिलती थी। किसी के सिर को सहलाते हुए, वे पूछते—'अब तुम कैसे हो ? तुम शीघ्र अच्छे हो जाओगे' आदि प्रश्नों के द्वारा मरीज़ों का आधा इलाज तो वे इसी प्रकार करते थे। मरीज़ों के मनोविज्ञान का अध्ययन उन्होंने गंभीरता पूर्वक किया था और उसी का परिणाम यह हुआ था कि प्रत्येक मरीज़ की मनःस्थिति उनके सामने पूर्ण स्पष्ट हो जाती थी। इस अस्पताल में ही वे रक्त परिभ्रमण संबंधी,खोज कर रहे थे; किन्तु उनके प्रयोगों ने उन्हें सफलता प्रदान नहीं की। वे हताश तो हुए ही नहीं। उनके प्रयोग चलते रहे। अंत में उन्होंने यह सिद्ध कर ही दिया कि रक्त का भी एक प्रमंडल होता है और रक्त का परिभ्रमण भी चलता रहता है।

आपरेशन थियेटर में पहुँचकर वे रक्त परिभ्रमण संबंधी खोज किया करते थे। हृदय की स्थिति और बनावट तथा फेफड़ों आदि के स्वरूप का अध्ययन विलियम हार्वे ने बड़ी गहनता के साथ किया था। एक बार वे किसी व्यक्ति का आपरेशन कर रहे थे। आपरेशन संभवतः फेफड़े का था। एक फेफड़ा कार्यहीन था। दूसरा कार्य कर रहा है। उन्होंने विचार किया कि यदि एक फेफड़ा निकाल दिया जावे तो क्या रक्त परिभ्रमण को

बाधा होगी। उन्होंने प्रयोग करना प्रारंभ किया और अंत में उस फेफड़े को निकाल दिया। उस समय तक दूसरा फेफड़ा लगाने का आविष्कार हुआ ही न था। विलियम हार्वे ने इस प्रयोग के बाद परिणाम का अध्ययन किया। उन्होंने देखा कि बचे फेफड़े में अधिक गति आ गई है और वह पहिले की अपेक्षा अधिक क्रियाशील हो गया है।

प्रयोग के समय विलियम हार्वे को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता था। रक्त हृदय में तो आता ही है, फेफड़े के द्वारा शुद्धीकरण होता है किन्तु यह रक्त आता कहाँ से है। इसकी खोज करना आवश्यक था। उनके प्रयोग चलते रहे और अंत में उन्होंने उसकी जाँच भी की। शिरा और धमनी का अध्ययन करते हुए उन्होंने यह पाया कि—शुद्धीकरण के बाद अशुद्ध रक्त शिराओं के द्वारा एकत्रित होता है। हृदय का परीक्षण और अवलोकन भी विलियम हार्वे ने किया था। विलियम हार्वे ने देखा कि हृदय बंद मुट्ठी के आकार का है। उसके चार भाग हैं। उन भागों के नाम दाहिना ग्राहक कोष्ठ, दाहिना क्षेपक कोष्ठ, बायाँ ग्राहक कोष्ठ बायाँ क्षेपक कोष्ठ। इस तरह का विवरण पूरा विलियम हार्वे ने दिया है। हृदय भर उसने स्पंज की तरह देखा। वायुकोषों का अध्ययन हार्वे ने किया था और उसी आधार पर उछ्वास तथा प्रश्वास का भी अध्ययन इस वैज्ञानिक ने किया। आश्चर्य होता है कि एक छोटे-से फेफड़े में असंख्य वायुकोष हैं जिनका कार्य निरंतर चलता रहता है। शिराओं और धमनियों का अध्ययन भी विलियम हार्वे ने किया था और अंत में उसने रक्त परिभ्रमण मण्डल की पूर्ण व्याख्या प्रस्तुत की।

विलियम हार्वे ने सन् १६२८ में जब रक्त परिभ्रमण चक्र पर लिखा तब सारे विश्व का ध्यान इस वैज्ञानिक की ओर केन्द्रित

हो गया। किन्हीं को विश्वास हुआ, किन्हीं को नहीं। इँग्लैण्ड के वैज्ञानिक इसे स्वीकार करते ही न थे कि विलियम हार्वे ने रक्त परिभ्रमण मण्डल का अध्ययन किया है और रक्त के परिभ्रमण की प्रक्रिया की खोज की है। अंत में विलियम हार्वे ने प्रयोग किये और अपना कथन सिद्ध कर दिया। इँग्लैण्ड के वैज्ञानिक स्तंभित रह गये और मैडिकल विज्ञान के क्षेत्र में एक नवीन युग आ गया।

सन् १६३६ में वे प्रिंस फर्डीनण्ड के मंत्रणालय में चले गये। इसके पश्चात् तो उस देश में गृह-युद्ध छिड़ गया। किन्तु विलियम हार्वे तो वैज्ञानिक थे। उन्हें राजनीति के साथ जोड़ना असंगत होगा। वे उस राजनीति से निर्लिप्त रहे। युद्ध के समय भी वे मरीजों की सेवा ही करते रहे और साथ ही अपने वैज्ञानिक परीक्षण।

आक्सफोर्ड में पहुँचकर विलियम हार्वे का ध्यान जनसंख्या और वंश परंपरा के अध्ययन की ओर गया। वे 'जनसंख्या' पर भी नई खोज करना चाहते थे किन्तु उनकी आयु पूरी हो चुकी थी। सन् १६५४ में रॉयल कालेज के डाक्टरों ने विलियम हार्वे के सम्मान की एक विस्तृत योजना बनाई। किन्तु हार्वे की शारीरिक शक्तियाँ क्षीण हो गई थीं। वे उस समारोह में जा नहीं सके। प्रयोग और प्रकृति के साथ संघर्ष करते-करते उनका शरीर जर्जर हो गया था और ३ जून १६५७ में उन्हें हाथ पैर में शून्यता का आभास हुआ। पता चला कि लकवा लग गया है। फिर तो धीरे-धीरे पूरा शरीर प्रभावित हो चला। बोलना भी बंद हो गया। वे अपने विचार ही प्रकट नहीं कर सकते थे। १६५७ में विलियम हार्वे का देहान्त हो गया।

जॉन डाल्टन

घुटनों पर बिल्ली बैठाए, सामने समाचार पत्र रखे और बगल में एक मूर्ति रखे एक व्यक्ति कमरे में अकेला बैठा-बैठा किसी गुत्थी को सुलझाने में व्यस्त है। अचानक उसका एक मित्र कमरे में प्रवेश करके उसका ध्यान भंग कर देता है। मित्र, उसकी इस मुद्रा से थोड़ा चकित हो जाता है। बिल्ली, अखबार और मूर्ति ! और फिर वह आगंतुक आश्चर्य चकित होकर मूर्ति उठा कर कहता है—"अरे, तुमने अपनी यह मूर्ति कब बनवाई ?"

"यह चेहरा ? नहीं, यह तो मेरा चेहरा है ही नहीं। यह तो न्यूटन है।"

"तो तुम्हारा चेहरा नहीं है यह ?"

"भगवान ने जब देखा कि हम दोनों का दिमाग एक-सा है, तो उसने हमारे चेहरे भी एक-से बना दिए।"

जॉन डाल्टन का जीवन कुछ इसी प्रकार के उदाहरणों से भरा पड़ा है। उसकी लम्बी जिन्दगी में अनेक ऐसे स्थल हैं, जो यह सिद्ध कर देते हैं कि होनहार बालक प्रारंभ से अपने गुण बतलाने लगता है।

डाल्टन को शुरू से गणित में दिलचस्पी थी। वह गणित के प्रश्न बड़ी सरलता से बहुत जल्दी हल कर लेता था।

क्लास में शिक्षक गणित पढ़ा रहे हैं। विद्यार्थी ध्यान पूर्वक उन कठिन और सरल प्रश्नों को समझ रहे हैं। डाल्टन ही है जिसे उन प्रश्नों को हल करने की रीति जानने में जरा भी उत्सुकता नहीं है। डाल्टन आखिर कर क्या रहा है ? डाल्टन बिना किसी

की सहायता के गणित के सारे प्रश्न हल करना चाहता है। शिक्षक को कभी-कभी वह मना करता है कि उसे रीति न बताई जाए।

और सिर्फ बारह वर्ष की उम्र में पढ़ाई समाप्त कर, अपना खुद का स्कूल खोल लेना बड़े साहस का कदम है। डाल्टन ने यह भी कर दिखाया। डाल्टन के स्कूल में बच्चे, युवक और युवतियाँ खुशी-खुशी भर्ती हो गए। उस स्कूल में पढ़ने वालों को मुफ्त किताबें, कागज, स्याही, कलम दिए जाते थे। उन दिनों कागज, कलम या स्याही का इतनी सरलता से मिल जाना, काफी विचित्र घटना समझी जाती थी। और स्कूल शान से चल पड़ा।

पन्द्रह वर्ष की उम्र में डाल्टन ने स्कूल बंद कर दिया और केण्डाल जाकर अपने चचेरे भाई को सहायता पहुँचाने लगा। बाद में वहाँ से भी जी ऊबने पर वह चल पड़ा। छोटे-मोटे काम करने के पश्चात् डाल्टन न सुन्दर-सुन्दर फूलों का संग्रह किया और उस संग्रह को बेचने का प्रयत्न किया, पर वह असफल रहा। उस संग्रह में डाल्टन ने तितलियों को भी शामिल करके बेचना चाहा दुबारा और तब भी असफलता ही उसके हाथ लगी।

फिर डाल्टन ने एक अजीब प्रयोग किया अपने ऊपर। कितना भोजन करने पर, कितना पसीना निकलता है और दोनों का कितना अनुपात है, डाल्टन ने यह भी मालूम करने का जी तोड़ प्रयत्न किया। इस बार भी वह किसी को प्रभावित न कर सका। पैसा कमाना तो दूर।

डाल्टन ने सुना था कि मैंचेस्टर में एक ऐसा कॉलिज खोला गया है, जो सत्य, स्वतंत्रता और धर्म पर आधारित है। चल

पड़ा डाल्टन वहाँ। नाम लिखाया और जीविका के लिए दूसरों को पढ़ाता। सुबह और रात में पढ़ाकर पैसे कमाता और दिन में खुद पढ़ता। उसका विश्वास था कि आदमी को तरह-तरह के धंधे, नौकरी करके अनुभव अर्जित करना चाहिए। स्वानुभव के आधार पर ही व्यक्ति की उन्नति संभव है, उसका दृढ़ विश्वास था।

एक दिन डाल्टन ने अपनी माँ के लिए मोजे का जोड़ा खरीदा और माँ को जाकर दिया। माँ तो खुश हुई, पर मोजे के रंग पर उन्हें शिकायत थी।

"कैसे रंग के मोजे लाये हो तुम डाल्टन ? मुझे यह रंग बिलकुल पसंद नहीं है।

"क्यों ? बड़ा प्यारा रंग है उनका ! क्या वे गहरे नीले रंग के नहीं हैं ?"

"गहरे नीले रंग के ?"

"हाँ, माँ।"

"क्या कह रहे हो तुम ? मोजे तो एकदम लाल रंग के हैं। चैरी जसे लाल सुर्ख।"

डाल्टन परेशान हो गया।

"बड़ी विचित्र चीज है माँ !"

तब उसे ख्याल आया कि उसके कोट के रंग को लेकर तरह-तरह की टिप्पणियाँ होती हैं। कई युवतियाँ कोट के हरे रंग पर आश्चर्य प्रकट करतीं। पर डाल्टन जवाब देता कि उसका कोट तो लाल रंग का है। तब सही कौन है ?

और डाल्टन प्रयोग करने लगा। अवलोकन से नए तथ्य सामने आए।

इस प्रकार अकस्मात् ही डाल्टन ने "रंग के अंधेपन" यानी "कलर ब्लाइंडनेस" की खोज कर डाली। कई व्यक्तियों को वास्तविक रंग कुछ और ही रंग के दिखाई पड़ते हैं।

डाल्टन इन घटनाओं से प्रभावित होकर रसायन शास्त्र में खोज और कार्य करने लगे थे। उन्हें पता था कि न्यूटन ने कहा था कि वस्तुओं का निर्माण अणुओं से होता है। प्रत्येक अणु दूसरे को आकर्षित करता है। इसे आधार मानकर डाल्टन ने रसायन शास्त्र की गैसों के ऊपर यह सिद्धांत लगाया। सौभाग्यवश डाल्टन ने गैसों में भी यह बात सही पाई और फिर एक नयी खोज का श्रेय डाल्टन को मिला।

आने वाले वर्षों में ऐवोगेड्रो ने डाल्टन के कथन को चुनौती दी थी और डाल्टन के कथन को गलत निरूपित किया था। परन्तु गैसों की रचना-संबंधी जानकारी देने का श्रेय तो डाल्टन को ही है। वे तथ्यों को खोजते रहे, उनकी गहराई में कभी नहीं गए।

प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध विद्वान रसायनशास्त्र के ज्ञाता डाल्टन से मिलने के लिए उत्सुक रहते थे। सभी लोगों का विश्वास था कि डाल्टन धनवान, रोबदार, गंभीर और अत्यंत व्यवस्थित व्यक्ति होंगे। खैर, डाल्टन व्यवस्थित तो थे। शेष सच न था।

एक दिन एक व्यक्ति डाल्टन से मिलने गया। तब तक उनकी ख्याति फैल चुकी थी चारों ओर और सभी उनके दर्शनों को लालायित रहते थे। नौकर आगंतुक को घर के भीतर ले गया। जिस कमरे में डाल्टन बैठे थे, उस कमरे के दरवाजे पर उन्हें छोड़ दिया गया।

उसने देखा कि एक व्यक्ति बैठा है कमरे के बीच में और एक बालक हाथ में स्लेट लिए कोई गणित लगा रहा है।

"क्या मैं डाल्टन से बातें कर सकता हूँ ?"—पूछा उस व्यक्ति ने ।

"हाँ, हाँ, अवश्य । कृपया आप कुछ देर बैठेंगे, थोड़ा मैं इस बच्चे को अंकगणित के सवाल समझा दूँ ?"—डाल्टन ने उत्तर दिया ।

आश्चर्य से उस व्यक्ति की आँख फटी रह गईं । अजीब आदतों वाला व्यक्ति था डाल्टन ।

———

मैं टेलीफ़ोन हूँ

मेरी राम कहानी विचित्र है। १० मार्च १८७६ को स्काट-लेण्ड में मेरा जन्म हुआ था। एडिनबर्ग के एक वैज्ञानिक ने मेरी खोज की थी। मेरे जन्म के बाद विज्ञान की खोजों के इतिहास में एक नवीन पृष्ठ जुड़ गया। सारे संसार के लोगों का ध्यान एकदम मेरी ओर केन्द्रित हो गया। मेरी उपयोगिता को लोगों ने समझा और आज मैं प्रत्येक दूकान, दफ्तर तथा अन्य स्थानों में हूँ। मेरी सत्ता व्यापक हो गई है। आज का युग मेरा ही युग है। आज मैं अकेला नहीं हूँ। मेरा जन्म तो अकेला हुआ था किन्तु मेरे जन्म के साथ ही मेरे अन्य रूपों की कल्पना तभी मेरे जन्मदाता ने कर ली थी और उसका परिणाम यह हुआ कि आज हर जगह मैं ही मैं दिखलाई देता हूँ। आज मेरी संख्या असंख्या है। मेरा जन्मदाता एडिनवर्ग का निवासी ग्राहम-बेल था। अन्वेषण के बाद उसने मेरा नाम टेलीफोन रखा।

मुझे खोजने वाले ग्राहम बेल का जन्म ३ मार्च सन् १८४७ में एडिनवर्ग में हुआ था। ग्राहम बेल के पिता का नाम अलेक्जेण्डर मेलविले बेल था। वे ध्वनि-विज्ञान के पण्डित थे। ग्राहम बेल की प्रारंभिक शिक्षा एडिनबर्ग हाईस्कूल में हुई थी। इसके पश्चात् वे उसी शहर के विश्वविद्यालय में पढ़ने लगे। बाद में वे यूनिवर्सिटी कालेज लन्दन तथा वर्जवर्ग में अध्ययन करने चले गये। जर्मनी की वर्जवर्ग यूनिवर्सिटी से ही उन्होंने पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की।

ग्राहमबेल ने मेरी खोज तो सन् १८७६ में की किन्तु जब उनका बचपन था, तभी से वे ध्वनि-विज्ञान की ओर विशेष रुचि

लेते थे। यंत्र विज्ञान की ओर उनकी स्वाभाविक वृत्ति थी और उस वृत्ति के कारण ही वे तरह-तरह के अन्वेषणात्मक कार्य किया करते थे। एक बार ग्राहमबेल एडिनबर्ग स्कूल के पास एक मिल में अपने सहपाठियों के साथ गये। मिल मालिक ने ग्राहमबेल तथा उनके सहपाठियों को गेहूँ छानने का कार्य दिया। ग्राहमबेल को जब यह कार्य मिला तो वे उस कार्य के करने का नया तरीका खोजने लगे। उनके सभी साथी गेहूँ के दानों की धूल और छिलकों को बड़े श्रम के साथ हाथ से ही निकालने लगे किन्तु ग्राहमबेल ने तत्काल ही एक ब्रश बना लिया और सबसे पहिले गेहूँ को साफ कर मालिक को दे दिया। उसके अन्य साथी उस कार्य को पूरा नहीं कर पाये। ग्राहमबेल के इस कार्य को देख कर मिल मालिक स्तम्भित रह गया। उसने गेहूँ साफ करने का एक नया उपाय ग्राहमबेल से सीखा और पूरे मिल में उसी तरीके का प्रयोग किया जाने लगा। बाद में प्रत्येक मिल में गेहूँ को साफ करने वाला यंत्र लग गया। यह थी मेरे जन्मदाता ग्राहमबेल के स्कूल के जीवन की एक घटना।

ध्वनि-विज्ञान और ध्वनि-यंत्र का अध्ययन करते-करते मेरे अनुसन्धानकर्ता का स्वास्थ्य खराब हो गया। वह दिनों दिन पीला पड़ने लगा। उसके पिता को अधिक चिन्ता हुई और वे उसे लेकर केनाडा चले गये। बॉस्टन में दो वर्षों के बाद ग्राहमबेल ने वधिरों के लिए एक स्कूल खोला। इस शाला में शिक्षकों को प्रशिक्षण भी दिया जाता था। इस स्कूल में अनेक वधिर शिक्षण प्राप्त करने के लिए आते थे। केनाडा के लड़के और लड़कियां, युवक और युवतियाँ उसी शाला में ही प्रशिक्षण प्राप्त करते थे। उस शाला में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए एक वधिर युवती भी आती थी जिसका नाम मेबिल हबार्ड था। ग्राहमबेल ने इस वधिर युवती से विवाह कर लिया और उसकी

श्रवणेन्द्रिय पर ही तरह-तरह के ध्वनि संबंधी प्रयोग करने लगे। अंत में उन्होंने ध्वनि-यंत्र की खोज की।

अब तो ग्राहमबेल का आत्म-विश्वास जाग उठा। ध्वनि की सूक्ष्मता का अध्ययन भी उन्होंने कर ही लिया था। बधिरों के लिए शब्ददान करते-करते तथा ध्वनि-यंत्र की खोज करते-करते 'हारमोनिक टेलीग्राफ' के निर्माण की कल्पना भी उन्होंने कर ली थी। वे एक ऐसा संदेश वाहक टेलीग्राफ बनाना चाहते थे जिसके द्वारा एक ही तार के माध्यम से एक साथ सैकड़ों हजारों स्थानों में संदेश पहुँचाया जा सके। बिजली से चलने वाला यह संदेशवाहक 'ट्रान्समीटर' बनाने का प्रयोग करते हुए जब ट्रान्समीटर के तार से अचानक बिजली का तार छू गया तो उस क्रिया के होते ही शब्द दूर-दूर तक प्रसारित होने लगे। मेरे खोज करने वाले ग्राहमबेल ने अकस्मात ही इस ट्रान्समीटर और 'हारमोनिक टेलीग्राफ' की खोज की।

अब तो टेलीफोनी की शास्त्रीयता का अध्ययन ग्राहमबेल ने प्रारंभ कर दिया था। प्रत्येक बात को उसने समझा था। ग्राहम-बेल चाहता था कि बिजली का आश्रय लेकर शब्दों को 'ट्रान्स-मिशन' क्रिया के द्वारा अधिक दूर तक पहुँचा दिया जाय। 'हारमोनिक टेलीग्राफी' की खोज के समय उसने एक मृत व्यक्ति के कानों का परीक्षण किया और अपने प्रयोग भी किये। कानों के परीक्षण के समय वह हवा की गति का अध्ययन भी करता जा रहा था जिसके आधार पर शब्दों की ध्वनि उच्चारित होती थी। ग्राहमबेल ने विचार किया कि तरंगमयी ध्वनि हवा की तरंगों पर अवलंबित रहती है और इसी आधार को लेकर हवा का भार और शब्दों की तरंग के आधार पर उसने 'हारमोनिक टेलीग्राफी' की खोज की। उसने उस समय ऐसा यंत्र भी बना लिया था जिसके द्वारा ध्वनि को विस्तारित किया जा सकता

था। यही मेरे जन्म की भूमिका थी। मेरा प्रारंभिक रूप अस्पष्ट
था। एक दम खुरदुरा। मेरा जन्मदाता मुझ पर अनेकानेक
प्रयोग करता जा रहा था और मेरे शरीर में तरंगे नृत्य करने
लगी थीं। ध्वनि-तरंगों के कारण मेरे शरीर से भी तरंगमयी
ध्वनि विस्तारित होती थी। इस समय मेरी आकृति और निर्माण
की पूर्ण कल्पना मेरे अनुसन्धानकर्ता ने कर ली थी। मेरा स्वरूप
पूरा बन गया। ग्राहमबेल का एक सहायक था उसका नाम
'वाट्सन' था। उसने वाट्सन को बुलाया और कुछ निर्देश देकर
दूर, बहुत दूर भेज दिया। वाट्सन चला गया। मेरा शरीर और
भी अधिक विचित्र हो गया। एक पेटी जैसा मेरा शरीर, ऊपर
दो कीले जिनमें रिसीवर रखा जाता है। इस रिसीवर के दो
भाग कर दिये गये हैं। एक तो मेरा मुँह है जिसको लेकर टेली-
फोन पर बोलने वाला व्यक्ति बोलता है और दूसरा कान है जिसके
द्वारा वह दूसरों की उच्चरित ध्वनियों को सुनता है। प्रारंभिक
रूप मेरा और भी अधिक विचित्र था। मेरा कान और मुँह
अलग-अलग थे। बाद में उन्हें एक ही स्थान पर रखा गया।
अब तो मैं पहिले की तरह असुन्दर नहीं हूँ। मेरा रंग आज
इतना मनमोहक हो गया है कि टेलीफ़ोन करने वाले प्रत्येक
व्यक्ति का आकर्षण तो होता ही है इसके साथ ही राहगीरों की
दृष्टि भी अटक-अटक जाती है।

१५ फरवरी १८७६ को ग्राहमबेल ने मेरे पंजीयन के लिए
युनाइटेड स्टेट्स के पंजीयन-कार्यालय में एक आवेदन-पत्र दिया।
मेरे अनुसन्धान कर्ता के आवेदन पत्र देने के ठीक दो घंटे
बाद 'एलिशॉ ग्रे' ने भी एक आवेदन पत्र दिया। इस आवेदन
पत्र में भी मेरे ही आविष्कार के पंजीयन की प्रार्थना थी। अब
तो मेरे निर्माण की कल्पना दोनों स्थानों पर समान रूप से कर
ली गई थी। ग्राहमबेल तो मेरा प्रथम आविष्कारक था किन्तु

उसके साथ ही दूसरा आविष्कारक 'एलिशॉ ग्रे' भी था। दोनों ने अपने स्वामित्व का दावा किया। प्रयोग चले। अन्त में मैदान मेरे ही आविष्कारक ग्राहमबेल के हाथ लगा।

ग्राहमबेल ने १० मार्च १८७० को बोस्टन बोर्डिङ्ग हाउस का एक कक्ष लिया और उस कक्ष में मेरी यंत्र-क्रिया की। एक छोर पर मेरा अन्वेषक खड़ा हो गया और दूसरे छोर पर वाट्सन, मेरे अनुसन्धान कर्ता का सहायक। रिसीवर लेकर ग्राहमबेल ने कहा—

'वाट्सन !' 'यस सर,' वाट्सन का स्वर था।

'केन यू हियर मी ?' 'यस सर,' वाट्सन ने उत्तर दिया।

'केन यू हियर माइ व्हाइस क्लीयरली ?' ग्राहमबेल ने पूछा।

'यस सर !' वाट्सन ने कहा।

ये प्रथम उच्चारण थे जिनके द्वारा मेरा उद्घाटन मेरे अन्वेषक ने किया। ग्राहगबेल ने मेरा प्रदर्शन सर्व प्रथम फिलाडेल्फिया में किया। यहाँ ही ग्राहमबेल ने एक प्रयोगशाला खोलने की योजना बनाई। इसके पश्चात् तो मेरे स्वरूप में परिवर्तन और परिवद्र्धन होने लगा। मैं ही एक ऐसा साधन हुआ जिसके द्वारा दूर और पास के सम्बन्धों को जोड़ दिया गया।

मेरे अनुसन्धानकर्ता अलेकज़ेण्डर ग्राहमबेल ने बुडक (नोवास्कोरिया) में अपना घर बनाया और वहाँ रहकर खोज करने लगा। मेरे अन्वेषणकर्ता ने अन्य अनेक आविष्कार किये। अन्त में मेरे आविष्कारक के विषय में यह कहा जाने लगा कि उसे न गणित का ज्ञान था, न भौतिक, रसायन तथा अन्य तकनीकी ज्ञान था इसलिए यह तो एक अकस्मात घटना ही थी कि मेरा आविष्कार हो गया और मेरे आविष्कार का श्रेय अलेकज़ेण्डर ग्राहम बेल को मिला। अन्त में मेरे आविष्कारक के आलोचकों

ने यह स्वीकार कर ही लिया कि मेरे आविष्कारक को तकनीकी ज्ञान भी था इसके अतिरिक्त वह ध्वनि-विज्ञान का पंडित भी था।

मेरा आविष्कारक अलेकज़ेण्डर ग्राहमबेल बहुत बड़ा ध्वनि शास्त्री था। उसने सन् १९१२ में 'विश्व भर में अंग्रेजी' की व्यापकता के लिए अपील की। अँग्रेजी के ध्वनि सम्बन्धी प्रयोग उसने किये थे और उसने ही सर्वप्रथम यह कहा था कि ध्वनि-विज्ञान की दृष्टि से अँग्रेजी ही ऐसी भाषा है जिसे विश्व के सभी भूभागों के निवासी उच्चरित कर सकते हैं। सन् १९१९ में उसने हाइड्रोप्लेन तथा १९२२ में मरुस्थलों में उपयोग के लिए एक नये यंत्र की खोज की। यह काल ही मेरे अन्वेषणकर्ता का कीर्ति-काल था। ग्राहमबेल जीवन भर विज्ञान के मोनोग्राम ही बनाते रहे और १८९८ के कुछ काल पूर्व वे नेशनल जाग्रफिक सोसाइटी के सभापति थे। १८९८ में ग्राहमबेल स्मिथ सोनियन इंस्टीट्यूट के प्रधान नियुक्त किये गये। सन् १९२२ के २ अक्टूबर को अलेकज़ेण्डर ग्राहमबेल की मृत्यु हो गई। मेरा अन्वेषक इस तिथि को इस धरा से उठ गया किन्तु जब आप मेरा रिसीवर उठाते हैं तब मैं अपनी भाषा में ग्राहमबेल का नाम लेता बज उठता हूँ। बजता रहता हूँ। उस समय तक जब तक कोई मेरे रिसीवर को उठा नहीं लेता। मैं टेलीफोन हूँ। विश्व का अत्यन्त महत्वपूर्ण वैज्ञानिक आविष्कार।

———

बिजली का जादूगर

'नेविंग्टन बट्स' नामक नगर का कोलाहल से भरा हुआ एक बाजार। एक तेरह वर्ष का बालक। सर पर गजटों का एक बंडल धरे तेजी से एक दूकान की ओर भागता जा रहा था। उसके बगल में भी गजटों का ही एक बंडल और रखा था। कुछ गजट किसी दूकान में डालता और आगे दौड़ता बढ़ता जा रहा था। संघर्ष करते उसका शरीर कृश हो गया था। उसकी जीविका का साधन और कुछ था ही नहीं, ऐसा प्रतीत हो रहा था। बाजार का कोलाहल और उस बालक की कार्यगति। अखबार बाँटने का कार्य वह स्थानीय एक अखबार बक्रेता और पुस्तकों का व्यापार करने वाले रीबों के यहाँ का नौकर था। उसे एक नौसिखिए के रूप में रखा गया था। इस नौकरी से उसे कुछ मिलता ही न था। श्रम ही उसे करना पड़ता था। उस बालक की आँखें तेज थीं। प्रत्येक आने-जाने वाले व्यक्ति को लापरवाही से देखता वह दौड़-दौड़ कर अख-बार बाँट रहा था। उसकी गति अलग दिख रही थी। उसे देखने से ही ऐसा लगता था कि वह एक प्रतिभा सम्पन्न बालक है किन्तु जीवन के लिए उसे संघर्ष करना पड़ रहा था। तेरह वर्ष की आयु थी। संघर्षों के तेरह ढेर जैसे उसकी पीठ और सिर पर लदे हुए थे। वह बालक विद्युत प्रवाह की खोज करने वाला माइकेल फेराडे था।

२२ सितम्बर १७९१ में फेराडे का जन्म 'नेविंग्टन बट्स' में हुग्रा। उसके पिता जेम्स फेराडे लुहारी का कार्य करते थे। ग्राय कम थी और घर में रहने वालों की संख्या अधिक। अपने

आश्रितों का भरण-पोषण भी जेम्स फेराडे मुश्किल से कर पाते थे। गरीबी का अनुभव माइकेल फेराडे को प्रारम्भ से ही होने लगा। जीवन-यापन के लिए उनका परिवार मेनचेस्टर आ गया। माइकेल फेराडे का पढ़ना-लिखना प्रारम्भ हुआ। गरीबी पढ़ने तो दे ही नहीं रही थी। गणित और अन्य यांत्रिक विषयों को पढ़ने की रुचि माइकेल फेराडे में थी ही। उसने प्रारम्भ किया और कुछ ज्ञान पा ही गया। तेरह वर्ष की आयु में रीबों के यहाँ नौकर हुआ। नौकर भी इस शर्त पर कि उसे बदले में रुपये मिलते ही नहीं थे। माइकेल फेराडे ने बुक बाइंडिग का धंधा अपनाया। माइकेल फेराडे रीबों की दूकान पर बैठता और पुस्तकें बेचा करता था। इस दूकान पर बहुत-से लोग आते। बालक माइकेल फेराडे के व्यवहार ने वहुत से ग्राहकों का ध्यान आकर्षित कर लिया था। इसी दूकान पर मि० डॉन्स भी आया करते थे जो उस समय रॉयल इस्टीट्यूट के एक सदस्य थे। उसी समय सर एच० डेव्ही के कुछ व्याख्यान हुए। माइकेल फेराडे की वृत्ति जिज्ञासु तो थी; इसके साथ ही उसके मन में यह लालसा भी थी कि वह किसी प्रकार पढ़ना-लिखना सीख जाये। उसका ज्ञान अभी अधूरा था। जीवन के संघर्ष इतने थे कि उसे पढ़ने-लिखने का अवसर ही नहीं मिल पाता था। फेराडे ने सर डेव्ही के व्याख्यान के नोट्स तैयार किये और उन्हें डेव्ही के पास भेज दिया। एक बार माइकेल फेराडे ने डेव्ही से पूछा—'सर, मैंने आपके व्याख्यान के नोट्स लिये थे उन्हें आपके पास भेजा था। क्या आपने उन्हें देखा है ?'

'नहीं।' सर डेव्ही ने कहा और यह भी कहते गये कि वह भाषण तो विज्ञान से संबंध रखता है। तुमने उसके नोट्स कैसे लिये होंगे।

माइकेल फेराडे उनकी इस बात को सुनकर निराश हो

गया। उसी निराशा में वह समय के पूर्व ही सोने का उपक्रम करने लगा। तरह-तरह के विकल्प उसके मन में दौड़ रहे थे। उसका भविष्य अंधकारमय था। कुछ दिखलाई ही नहीं देता था। कुछ सूझता भी न था कि वह क्या करे। उसके अंतर की प्रतिभा उसे झकझोरे दे रही थी किन्तु आगे का रास्ता अँधेरे से भरा हुआ था। वह बेचैन करवटें बदल रहा था। वह बेचैन और मानसिक रूप से अस्त-व्यस्त था। नींद भी नहीं आ रही थी कि उसे इस अशांति से मुक्ति मिलती। उसी समय दरवाजे पर खट्-खट् की आवाज हुई।

माइकेल फेराडे उसी दशा में बिस्तर पर पड़ा रहा। उसने सोचा कि शायद पवन की तीव्रता के कारण साँकल के हिलने-डुलने की खड़खड़ाहट है। वह उसी दशा में पड़ा था। अशान्त! एकदम बेचैन! फिर दरवाजे पर खट्-खट् खट्-खट् की आवाज हुई। माइकेल फेराडे का भ्रम जाता रहा। वह उठा और अनेक संकल्पों-विकल्पों के संघर्ष में पड़ा हुआ दरवाजे की ओर चल पड़ा। उसके पाँव जैसे बढ़ते ही नहीं थे। वह अस्थिर था। धीमी गति से दरवाजे की ओर बढ़ा चला जा रहा था। उसने दरवाजे खोल दिये और आगन्तुक से पूछा—

'कौन है बाहर ?'

'मैं सर डेव्ही का नौकर हूँ' आगन्तुक ने कहा।

माइकेल फेराडे की आँखें चमक उठीं। आगन्तुक ने फेराडे से कहा कि कल सुबह उसे रॉयल इंस्टीट्यूट आना है। आगन्तुक चला गया। फेराडे ने दरवाजे बंद कर लिये। वह बिस्तर पर लेट गया। उसे अपना भविष्य कुछ उज्ज्वल-सा दिखलाई देने लगा था। नई-नई आशाओं में डूबते-उतराते उसे नींद आ गई। माइकेल फेराडे दूसरे दिन रॉयल इंस्टीट्यूट गया। उसे असिस्टेण्ट की नौकरी मिल गई। उसका भविष्य उसे मिल गया।

सर डेव्ही एक ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक थे। डेव्ही के निर्देशन पर माइकेल फेराडे ने पहिला प्रयोग किया। उसने रासायनिक द्रव्यों का सूक्ष्म अध्ययन किया। रासायनिक प्रयोग कर फेराडे ने विज्ञान में एक नया अध्याय जोड़ा। फेराडे ने अनेक प्रकार के काँचों की खोज की। उसने सन् १८२५ में बेंज़ोल की खोज की। फेराडे को प्रयोग के अवसर मिलने लगे थे। वह १८२३ में रॉयल सोसाइटी का 'फेलो' चुन लिया गया। दो वर्ष बाद ही वह उसी लेबोरटरी का संचालक नियुक्त हो गया। इसी समय फेराडे 'चुम्बक द्वारा बिजली' उत्पन्न करने का प्रयोग कर रहा था। उसने इसी समय चुम्बक द्वारा बिजली उत्पन्न होने की खोज की। फेराडे का सर्वश्रेष्ठ अनुसन्धान यही था। विद्युत चुम्बक-चालक में यदि गति हो तो बिजली का उत्पादन हो जाता है। इसी आधार पर डायनमो की खोज की।

माइकेल फेराडे में विज्ञान की खोजों के प्रति बड़ी आस्था थी। रॉयल इंस्टीट्यूट में रहते हुए माइकेल फेराडे ने अनेक प्रयोग किये। अनेक वैज्ञानिक इस रॉयल इंस्टीट्यूट में आये और उन्होंने चर्चा भी की फेराडे से। फेराडे का अनुसन्धान केवल उसकी अपनी सीमा तक ही सीमित नहीं रहा। सारे विश्व में उस अनुसन्धान से लाभ लिया जाने लगा।

फेराडे के सामने कोई समस्या आती तो वह उसका विश्लेषण करता। कोई ऐसा दृश्य आ जाता कि उसे वैज्ञानिक खोज की संधि मिल जाती और वह नई खोजें करने लगता। प्रकृति और समाज ही फेराडे के अनुसन्धान-केन्द्र थे। इन अनुसन्धान केन्द्रों को चलाने वाला था माइकेल फेराडे। नई खोजों को करते हुए फेराडे का समय बीतता जा रहा था। बिजली के नये-नये प्रयोग फेराडे करता जा रहा था। नई-नई वस्तुएँ विज्ञान जगत में आती जा रही थीं और माइकेल फेराडे का नाम और अधिक

परिचित होता जा रहा था । अब तो फेराडे के लिए बिजली के प्रयोग खेल-से हो गये ।

फेराडे बच्चों को बुलाता और उन्हें दो खाली तार दिखा देता। फिर उन्हें किसी चुम्बक से उत्पन्न बिजली से स्पर्श करा देता । उन तारों पर लगे बल्ब जल जाते । बच्चे प्रसन्न हो उठते ।

१२ जून १८२१ को फेराडे का विवाह हुआ सॉराह बर्नार्ड से । साराह भी फेराडे की अनुसन्धान प्रक्रिया में सहायक हुई और उसके बाद फेराडे ने अनेक प्रयोग किये । आज यदि साइकिल तेजी से जा रही हो और साइकिल के सामने लगी हुई वस्तु यदि दूर तक प्रकाश फ़ेंके तो समझो कि वह डॉयनमो है । इसे माइकेल फेराडे ने ही खोजा था । यदि पहाड़ियों के बीच में बसे हुए गाँव में अचानक बल्बों की ज्योति दिखने लगे तो यह समझना चाहिये कि यह जनरेटर है । यह भी माइकेल फेराडे की ही देन थी ।

१८४१ का समय । माइकेल फेराडे बीमार पड़ गया । जीवन भर का अथक परिश्रम । वैज्ञानिक खोजों की नई प्रेरणा और नई खोजें । माइकेल फेराडे का शरीर टूट गया । वह क्रिया हीन होने लगा । संज्ञाहीन-सा रहने लगा । २५ अगस्त १८६७ तक उसकी स्मृतियाँ धूमिल हो चलीं । २५ अगस्त १८६७ की एक शाम । सभी चिन्तित थे। फेराडे बिस्तर पर लेटा था। संज्ञाहीन, निस्तेज और निश्चेष्ट । साँसें रुकती जा रही थीं । फेराडे चल बसा । किन्तु, उसकी खोज जीवित रह गई । आज चुम्बक को देखते ही फेराडे की स्मृति ताजी हो जाती है । सारा विद्युत-प्रवाह आँखों के सामने झूलने लगता है। जनरेटर के द्वारा बल्ब जल उठते हैं और उन बल्बों के ऊपर एक चित्र उभर आता है । एक धूमिल चित्र । चित्र अपनी ओर खींच लेता है और अपनी आत्मकथा कह उठता है । वह चित्र अनुसन्धान की गाथा गा उठता है और कह उठता माइकेल...फेराडे...का विज्ञान-दर्शन!

ग्रामोफ़ोन, केमरा और बल्ब

सन् १८६२ में अमेरिका के रेलवे स्टेशन की एक सुबह। ठंडी सुबह। वातावरण एक दम व्यस्त और कोलाहल से भर-पूर। स्टेशन के प्लेटफार्म पर कुलियों की दौड़-धूप। एक कुली ने घंटी बजाई और सिगनल के पास रेल भकभकाती, आकाश में धुँआ फेंकती हुई तीव्र गति से दौड़ती आती दिखलाई दी। प्लेटफार्म के कोने में, कोलाहल से दूर एक नवयुवक खड़ा है। रेल की पटरियों के बीच एक बालक खेल रहा है। बालक स्टेशन मास्टर का पुत्र था। रेल और पास आ गई। और भी पास। बालक उसी स्थान पर खड़े होकर रेल के आने की पर-वाह किये बिना ही अपने खेल में व्यस्त था। रेल के आने की सूचना भी उसे शायद थी ही नहीं। वह आई रेल। नवयुवक की निगाह पटरियों के बीच में खेलते हुए उस बालक पर गई। उस नवयुवक ने अपने बगल में दबे हुए—अखबारों के बंडल को एक ओर फेंका और देखते ही देखते बालक की ओर लपका। वह बालक को खींचकर पटरी के बाहर ले ही जा पाया था कि सीटी बजाता हुआ रेल का एंजिन आ पहुँचा। नवयुवक बालक को अपने बगल में दबाये पटरी के कुछ दूर पड़ा था। गाड़ी निकल चुकी थी। इधर स्टेशन मास्टर मूच्छित होकर गिर पड़े। 'मेरा बेटा !' कह कर चिल्ला उठे और अधीर होकर उसी दिशा में दौड़ते गये, जहाँ बालक खेल रहा था। पटरियों पर खड़ी रेल की पंक्ति उनकी बाधक बन गई। वे अचेत-से हो रहे। कुछ देर बाद उन्हें होश आया। अपने आस-पास भारी भीड़ में अपने पुत्र को न पाकर वे चिल्ला उठे 'मेरा बेटा ! मेरा बेटा !!'

उनकी इस दुख-भरी आवाज़ को इस नवयुवक ने सुना और वह स्टेशन मास्टर के उस पुत्र को लेकर स्टेशन मास्टर के पास पहुँचा, स्टेशन मास्टर अपने पुत्र को देख कर खुशी से पागल-सा हो गया। उसने बेटे को खूब प्यार किया और बड़ी कृतज्ञता के साथ बालक के पास ही खड़े उस नवयुवक की ओर दृष्टि फेरी।

वह नवयुवक एडीसन था।

स्टेशन मास्टर नवयुवक के इस उपकार का कुछ प्रतिदान देना चाहता था। एडीसन ने उसे अस्वीकार कर दिया।

'तुम कुछ द्रव्य ले लो एडीसन।' स्टेशन मास्टर मेकेन्ज़ी ने कहा!

'नहीं! कुछ नहीं!!' एडीसन बोला और चलने लगा। उसी समय स्टेशन मास्टर ने कहा कि यदि तुम कुछ स्वीकार नहीं करते तो मैं ट्रेन टेलीग्राफी ही सिखा कर तुम्हारे उपकार का प्रतिदान दूँगा।

एडीसन की आँखें चमक उठीं और उसने बड़ी कृतज्ञता के साथ स्टशन मास्टर की ओर देखा। एडीसन के मस्तिष्क में विज्ञान की खोज की प्रवृत्ति जागृत हो गई थी।

एडीसन ने स्टेशन मास्टर मेकेन्ज़ी से ट्रेन टेलीग्राफी सीखी। ट्रेन टलीग्राफी का अच्छा अभ्यास एडीसन ने कर लिया था और वह एक अच्छा ज्ञाता भी हो गया। उसने ऑपरेटर का पद प्राप्त कर लिया और अपने ज्ञान को और भी अधिक व्यापक करने लगा। टेलीग्राफी का कार्य करते समय उसकी दृष्टि वैज्ञानिक की दृष्टि थी। उसने उसका वैज्ञानिक अध्ययन करना प्रारंभ किया और उसके संबंध की अन्य यांत्रिक बातों का ज्ञान भी प्राप्त कर लिया।

कौन जानता था कि इस समय का टेलीग्राफ ऑपरेटर और

भविष्य का एक महान् वैज्ञानिक आविष्कारक एडीसन अपने बचपन में नितान्त मंद बुद्धि, साधारण, नटखटी और लापरवाह बालक रहा होगा।

११ फरवरी १८४७ को एडीसन ने मिलान, ओहियो में जन्म लिया था। एडीसन सात वर्ष का हो गया। स्कूल जाने लगा। स्कूल का अनुशासित वातावरण एडीसन की प्रकृति के अनुकूल तो था नहीं। उसका मन स्कूल में लगता ही नहीं था। कक्षा के सभी लड़के पढ़ाई में आगे जाते, किन्तु एडीसन ऐसा था कि उसका ध्यान न पढ़ने में लगता था न लिखने में। वह शाला के उस अनुशासित वातावरण से दूर भाग जाना चाहता था। एडीसन अन्यमनस्क रहता। शिक्षक जब पढ़ाते तब वह उनका मुँह ताकता रहता। अँगुलियों से माथा खुजलाने लगता या गुमसुम बैठा रहता। एडीसन की इस गुमसुम अवस्था को देखकर शिक्षक खीझ कर पूछ बैठता—

'एडीसन ! संज्ञा की परिभाषा क्या है ?'

एडीसन कुछ बोलता नहीं। प्रश्न को सुनकर कुछ अचकचा कर कह उठता 'यस सर'।

कक्षा के लड़के खिलखिला कर हँस पड़ते।

शिक्षक एडीसन को 'मूर्ख' और 'सुस्त' जैसे शब्दों से संबोधित करता। कक्षा के सभी लड़के एडीसन को तिरस्कार भरी दृष्टि से देखते। उसे शाला का वातावरण और भी अपरिचित लगने लगा। तीन महीने में ही एडीसन ने स्कूल का पढ़ना-लिखना छोड़ दिया।

एडीसन की स्कूल की शिक्षा समाप्त हो गई किन्तु उसे जीवन के क्षेत्र में नये-नये अनुभव प्राप्त होने लगे। एडीसन की माँ ने भी उसे जीवन की व्यावहारिक शिक्षा दी।

एडीसन चंचल तो था ही। स्कूल का पढ़ना भी छूट गया

अब तो उसे ऊधम करने का अवसर भी खूब मिलने लगा। विज्ञान की ओर उसका झुकाव तो था ही। वृत्ति भी उसकी वैज्ञानिक ही थी। वह बचपन में ही तरह-तरह के अर्थहीन प्रयोग किया करता। एक दिन सुबह होने के कुछ समय पूर्व मुर्गी के अण्डों को छिपाकर एडीसन मुर्गी की बोली की नकल करने लगा। घर के लोग परेशान हो उठे। दूसरे दिन तरह तरह के नकली पाउडर बनाने लगा। वह उस पाउडर को मजे में खाता भी रहता। सोचता था कि उस पाउडर को खाकर वह आकाश में उड़ने लगेगा। किन्तु सब व्यर्थ। वह पाउडर तो बहुत-सा खा जाता, किन्तु उड़ने की दिशा में उसके पैर ज़मीन से चिपके रहते। आकाश में उड़ना तो दूर रहा।

सन् १८६७ की बात है। एडीसन टेलीग्राफ आपरेटर का कार्य कर ही रहा था। उसे वहाँ का वातावरण और अनुभव का क्षेत्र कुछ सीमित लगने लगा। अचानक उसने आपरेटर का कार्य छोड़ दिया और नये ज्ञान-क्षेत्र की खोज के लिए न्यूयार्क चल पड़ा। न्यूयार्क पहुँचते-पहुँचते उसके पास जितना धन था, वह मार्ग में ही खर्च हो गया। न्यूयार्क पहुँचा तो खाली हाथ। जब वह न्यूयार्क स्टेशन पर उतरा, उस समय वह भूख से व्याकुल हो रहा था। वह खाली पेट 'गोल्ड इंडीकेटर कंपनी' की ओर बढ़ा जा रहा था किन्तु उसके पैर जवाब दे रहे थे। आगे बढ़ते ही नहीं थे। वह 'गोल्ड इंडीकेटर कंपनी' के बैटरी रूम में निराश बैठा था। भविष्य का विकराल रूप उसके सामने था। वह सोच रहा था कि भविष्य में उसका क्या होगा। उसके पास अनाज का एक कण भी नहीं है। रुपये भी नहीं हैं कि वह अपना पेट भर सके। भूख की ज्वाला ने उसके तन मन में निराशा और निष्क्रियता भर दी थी। वह सोचता था—क्या भविष्य में मुझे भूखे ही रहना पड़ेगा और इस तरह मेरा अन्त हो

जायगा ? कोई पथ दिखाई नहीं दे रहा था। चारों तरफ निराशा और मनहूसियत। चारों तरफ अँधेरा ही अँधेरा। वह भूख के कारण कराह उठा और बेंच पर लेट गया। रात आई। चारों तरफ निराशा की परछाइयाँ उसे दिखने लगीं। दीवाल पर लगे हुए बल्बों का प्रकाश भी मंद पड़ने लगा। उसकी आँखें मुँदने लगीं और पता नहीं कब वह सो गया। सुबह जब नीद टूटी, तब उसमें इतनी शक्ति नहीं थी कि वह उठ सके। वह लेटा-लेटा खिड़की की ओर देखने लगा। कंपनी के पास ही एक रेस्तराँ था। रेस्तराँ में आगन्तुकों की भीड़ थी। रेस्तराँ से आने-जाने वाले व्यक्तियों के संतोष से उसे घृणा होने लगी। उसकी भूख की ज्वाला तीव्रतर होती जा रही थी। दोपहर हुई। एडीसन भूखा-प्यासा उसी बेंच पर पड़ा रहा। रात्रि आई। एडीसन अब भी भूखा उसी बेंच पर निराश लेटा रहा। रात बढ़ती जा रही थी और एडीसन के हाथ पाँवों में शून्यता भरती जा रही थी। पता नहीं कब उसे नींद आ गई। सुबह जब वह उठा तो साहस कर दरवाजे के बाहर चला गया। धूप तापता रहा और राहगीरों को देखता रहा। ११ बजे के करीब वह उसी कंपनी के आफिस में बैठ गया और निराश दृष्टि से आफिस का कार्य देखने लगा। उसी समय सुपरिन्टेन्डेण्ट भी आफिस में आ गया। वह उठा तक नहीं। उसमें इतनी शक्ति शेष थी नहीं कि खड़ा भी हो सके। अचानक झन-झन खन-खन की आवाज़ हुई। उसने घूम कर देखा कि ट्रान्समीटर जमीन पर टूटा पड़ा है। सुपरिन्टेन्डेण्ट क्रोधित हो उठा और क्रोध में अपने बाल नोचने लगा। एडीसन साहस बटोर कर उठा और उसने उस टूटे ट्रान्समीटर को सुधार दिया। सुपरिन्टेन्डेण्ट उसकी उस कला पर प्रसन्न हो उठा और उसने एडीसन की उसी कंपनी के प्रधान व्यक्ति से भेंट कराई। एडीसन उस पूरी कंपनी का मैनेजर नियुक्त हो गया।

मैनेजर के पद पर कार्य करते एडीसन को दो वर्ष बीत गये। उसे वहाँ का वातावरण भी सीमित लगने लगा। अन्वेषण की वृत्ति तो उसमें पहिले से थी ही। वह उस पद को भी छोड़ चला। १८६९ के अक्टूबर मास में एडीसन ने एक नवयुवक टेलीग्राफ इंजीनियर पोप की सहायता से "गोल्ड प्रिंटर" का अन्वेषण किया। अन्वेषण की वृत्ति उसकी बढ़ती जा रही थी। वह नई खोज करने के लिए प्यासे-सा आकुल हो उठता था। उसका सारा भविष्य, उसकी सारी योजना उसकी आँखों के सामने नाच उठती। नई खोजों का ध्यान उसे अस्थिर बना देता। वह बेचैन हो उठता और नई आशा का एक सम्पूर्ण वृत्त उसकी दृष्टि को आवृत्त कर लेता। उसकी आँखें चमक उठतीं। जैसे उसने कुछ नया पा लिया हो। वेस्टर्न यूनियन के प्रेसीडेंट ने पूछा—

'एडीसन ! क्या तुम टेप मशीन को कुछ और विकसित कर सकते हो ?'

'हाँ !' एडीसन ने कहा।

और वह टेप मशीन को अधिक विकसित रूप देने का संकल्प कर बैठा। अंत में उसने 'टेप मशीन' के विस्तार की खोज कर ही ली। उस टेप-मशीन का नाम भी 'एडीसन यूनिव्हर्सल प्रिंटर' रखा गया। प्रेसीडेंट ने एडीसन से कहा—

"एडीसन ! क्या इस खोज को चालीस हजार डालर में बेच सकते हो ?"

एडीसन हकबका-सा गया। मूर्च्छित-सा हो रहा। उसने यह कल्पना ही नहीं की थी कि उसकी इस खोज का इतना अधिक मूल्य आँका जा सकता है।

एडीसन ने न्यूयार्क में एक बड़ी दूकान खोली। एक कारखाना भी खोला। वह इस कारखाने में टेप मशीन बनाने लगा और

उस मशीन के अनेक अंग भी बनाये जाने लगे। उसके बहुत-से सहयोगियों ने उसके कार्य में सहायता दी और सारे संसार में टेप मशीन का प्रचार हो चला। एडीसन इस नये अन्वेषण के बाद भी चुप नहीं रहा। उसकी वृत्ति नये अन्वषणों की ओर थी ही। सन् १८७६ में उसने न्यायार्क में ही एक प्रयोग-शाला खोली। एक कारखाना भी खोला और इसी समय टेलीफोन पर उसकी नज़र पड़ी और उसने घंटी बजने वाले टेलीफोन की खोज की।

टेलीफोन की घंटी की आवाज़ ने उसमें नई चेतना भर दी थी। उसका अन्वेषण कार्य चल ही रहा था। इसी समय एडीसन ने 'इलेक्ट्रो मोटोग्राफ' की खोज की। इस नई खोज ने एडीसन को पूरे विश्व में परिचित बना दिया।

१८७७ की बात है। एडीसन ने अपने एक सहयोगी को एक स्केच खींचने का आदेश दिया। स्केच बनाया गया। एडीसन ने उसे फेंक दिया। वह फोनोग्राफ बनाना चाहता था।

'टीन का एक डब्बा लाओ।' एडीसन ने चिल्लाकर अपनी कंपनी के फोरमैन से कहा।

'यह रहा टीन का डिब्बा।'—फोरमैन ने व्यंग से हँस कर डिब्बा एडीसन के समक्ष रख दिया। एडीसन उस डिब्बे में मुँह डाल कर चिल्लाने लगा। डिब्बे में जहाँ-तहाँ ट्यूब लगा दिये थे। अंत में उसकी आँख उठीं।

"Mary had a little lamb" एडीसन ने कहा।

कुछ पुर्जे घुमाये और अंत में एडीसन और मेरी की वार्ता स्पष्ट सुनाई पड़ने लगी। उसने फोनोग्राफ की खोज कर ली। अन्त में एडीसन ने बिजली के संबंध की खोजें प्रारंभ कीं। एक ही विद्युत-प्रवाह के केन्द्र से संलग्न कर हजारों लेम्पों को एक साथ एक ही गति से जगमगा देने की खोज भी एडीसन ने ही की थी। विद्युत के प्रवाह और उसकी केन्द्रीयता के विषय में वैज्ञा-

निकों का विचार था कि विद्युत का प्रवाह लेकर एक ही प्रवाह केन्द्र से सभी विद्युत लेम्पों को विद्युत नहीं दी जा सकती। उनके इस असंभव को संभव बना देने का कार्य एडीसन ने किया था।

दिन बीतते गये और एडीसन नई-नई खोजें करता गया। उसने सिलाई के धागे पर कार्बन का नया प्रयोग प्रारंभ किया। उसने धागे को कार्बन युक्त कर उसे एक बल्ब में भर दिया और बल्ब का मुँह बंद कर दिया। बल्ब में से पूरी वायु निकाल दी गई और अन्त में कार्बन युक्त कर उसे बंद कर दिया गया। वह बल्ब जलने लगा और वह बल्ब प्रथम बार ४० घंटे तक जला। इस तरह इलेक्ट्रिक लेम्प की प्रथम खोज एडीसन ने की।

एडीसन ने पिक्चर केमरा की खोज भी की। सिनेमा के चलचित्रों की मशीन की खोज भी इसी वैज्ञानिक ने की थी। कोई जब एडीसन से पूछता कि वह क्या करना चाहता है तो सारा भविष्य उसके सामने नाचने लगता। उसकी आँखों के सामने आशा की नई किरणें चमकने लगतीं और वह प्रत्येक घटना का वैज्ञानिक निरीक्षण करता रहता। और अंत में उसने इतनी नई खोजें कीं कि वह संसार का श्रेष्ठ वैज्ञानिक बन गया।

आज स्विच पर हाथ पड़ते ही बिजली जल उठती है। टेलीफोन का रिसीवर उठाते ही किसी दूर से बोलने वाले व्यक्ति की आवाज़ कानों में गूँजने लगती है। ग्रामोफोन गा उठता है, वार्तालाप करने लगता है, एक छोटी-सी सुई लगाने और चाबी भरने पर।

सिनेमा में तरह-तरह की चित्रावलियाँ दिखलाई देती हैं।

फोटो को देखते ही केमरे की करामात की याद आ जाती है। यह केमरा भी कैसा है कि वह आदमी का हूबहू चित्र खींच लेता है। सूखे हुए वृक्ष की पत्रहीन डालियाँ भी रेखाओं-सी

फोटो में खिच जाती हैं। सूखे वृक्ष भी सुन्दर लगने लगते हैं। बिजली का स्विच, टेलीफोन का रिसीवर, केमरा तथा अन्य-अन्य चीजों को देखते ही थॉमस अल्वा एडीसन का चित्र आँखों के सामने खिच जाता है।

उस बेहद लापरवाह, श्रमचोर और आलसी लड़के ने ऐसी युगांतरकारी खोजें कैसे कर लीं? वह कहा करता था—'प्रतिभा एक प्रतिशत प्रेरणा और ९९ प्रतिशत पसीने से बनती है।'

———

इंद्रधनुष का रहस्य

बगीचे में चमचमाती हुई एक दोपहर। सेब के वृक्ष के नीचे एक युवक लेटा था। उसका मुँह आकाश की ओर था। वह उस वृक्ष की डालियाँ गिन रहा था। एक छोटी-सी शाखा उसे दिखी। वह डाली में लगे हुए सेबों की संख्या गिनने लगा। हवा तेजी से बह रही थी। फलों से लदी हुई वह डाली भी हिली। खूब हिली। युवक की गिनती गड़बड़ हो गई। अचानक पट् की आवाज हुई और उस युवक को कुछ गिरने का आभास हुआ। वह उस वस्तु की खोज करने लगा और अंत में उसे वह सेब मिल गया, जिसके कारण उस डाली में फलों की संख्या कम हो गई थी और जिसने उस युवक के विचारों को अस्त-व्यस्त कर दिया था। उसने वह सेब उठाया। कुछ विचार करता रहा। विचारों की टकराहट ने उसके अंगों को संज्ञा हीन-सा कर दिया था। सेब उसके हाथों से गिर पड़ा। उसे जमीन पर पड़ा हुआ वह सेब दिखाई दे रहा था, किन्तु इसके साथ उसे जमीन में कुछ और ही शक्ति का आभास भी मिल रहा था। वह 'नई खोज—नई खोज' चिल्लाता हुआ भागा और अपनी प्रयोगशाला में तरह-तरह के प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया। पृथ्वी की रहस्यमयी शक्ति की खोज ने उसे बेचैन कर दिया था। वह प्रयोग करता रहा और अथक प्रयोग करने के उपरान्त उसने पृथ्वी की 'गुरुत्वाकर्षण' शक्ति की खोज की। वह युवक न्यूटन था। आइज़क न्यूटन! विश्व का श्रेष्ठ वैज्ञानिक।

२५ दिसम्बर १६४२ का दिन। स्थान वूलसथ्थार्प। इसी

स्थान में इसी दिन न्यूटन का जन्म हुआ था। न्यूटन दो वर्ष का हुआ। नार्थ विथम् पहुँचा। चार वर्ष का हुआ। चौदह वर्ष का हुआ। कुछ पता नहीं कहाँ-कहाँ गया। १५ वर्ष का हुआ। स्कूल जाने लगा था। स्कूल जाता। पढ़ता। अन्य विषयों से विरक्त। पूर्ण विरक्त। पर गणित और यंत्र-विज्ञान का अध्ययन करता। तरह-तरह के खिलौने बनाता। वाटर क्लाक्स और तरह-तरह की पतंगें बनाकर उड़ाता और उनकी क्रियाओं का वैज्ञानिक विश्लेषण करता। विज्ञान के नये-नये प्रयोग करते रहने की आदत ही पड़ गई थी न्यूटन की। स्कूल का समय बीतने लगा। वह प्रयोग और करने लगा। वह केम्ब्रिज पहुँच गया।

केम्ब्रिज में वह पढ़ता रहा। प्रयोग भी करता रहा। सन् १६६५ में उसने स्नातक की डिग्री प्राप्त की। १६६७ में न्यूटन ट्रिनिटी कालेज का शोध-छात्र चुन लिया गया। उसने वैज्ञानिक अध्ययन प्रारंभ किया। सन् १६७२ में वह रॉयल सोसायटी का शोध-छात्र चुना गया। उसके प्रयोग चलते रहे। वह दिन भर प्रयोग करता और रात को उसी खोज की गुत्थियाँ सुलझाते-सुलझाते सो जाता। सुबह होता और न्यूटन फिर अपनी प्रयोग-शाला में चला जाता। एक सुबह जब न्यूटन अपने कमरे में सोकर उठा ही था कि उसके मुँह पर खिड़की के काँचों से पार होती हुई कुछ किरणें पड़ीं। किरण-रेखा तिरछी थी। यह एक नया अवसर मिल गया न्यूटन को। अब वह किरणों का वैज्ञा-निक अध्ययन कर सकता था। किरणें उसके मुँह पर पड़ रही थीं। वह किरणों के आने की दिशा में ही मुँह किये विचार-मग्न पड़ा था। अचानक उसकी दृष्टि दीवाल की ओर गई। उसने देखा कि किरणें दीवाल पर भी पड़ रही हैं। और उन किरणों की परछाँइयाँ आड़ी-तिरछी हैं। यह नया दृश्य न्यूटन के समक्ष था और इस दृश्य के गर्भ में छिपे हुए रहस्य को

खोजने की लालसा बढ़ती जा रही थी। वह प्रयोगशाला चल पड़ा। उसने तरह-तरह के घनत्व वाले काँच के टुकड़े लिये और उन प्लेटों पर किरणों के प्रयोग करने लगा। उसने देखा कि हवा में किरणों को फैलने का अवसर अधिक मिलता है। काँच की प्लेटों को पार कर जब किरणें पर्दे पर पड़ती हैं तब उनकी रेखाएँ आड़ी-तिरछी हो जाती हैं। उसने किरणों के आपसी संघर्ष का भी अध्ययन किया। पर्दे पर कभी तो एक दम गहरा अँधेरा छा जाता है और कभी अन्य रंग दिखलाई देते हैं। कुछ गोल-गोल वृत्त भी दिखने लगते। उसने घनत्व और प्रकाश की महत्व पूर्ण वैज्ञानिक खोज की। प्रकाश के इन किरनीले छोटे वृत्तों को 'न्यूटन रिंग्स' की संज्ञा दी गई।

न्यूटन की वैज्ञानिक खोजें विज्ञान जगत के समक्ष एक कौतूहल की वस्तु थीं। किन्तु ऐसे कौतूहल उत्पन्न करने वाला न्यूटन दिन-रात अपने प्रयोगों में ही व्यस्त रहता। तरह-तरह के प्रयोग करता और ये प्रयोग न्यूटन की नई खोजों की प्रारंभिक भूमिकाएँ होतीं।

ट्रिनिटी कालेज की प्रयोगशाला ही न्यूटन का अनुसंधान केन्द्र थी। गणित की समस्याओं को सुलझाते-सुलझाते न्यूटन पूर्ण गणितज्ञ हो गया था। सन् १६६९ में ट्रिनिटी कालेज के गणित के प्रोफेसर की मृत्यु हो गई। नये प्रोफेसर को नियुक्त करने की समस्या आई। कोई गणितज्ञ दिखाई ही नहीं पड़ रहा था। अधिकारियों का ध्यान न्यूटन की ओर केन्द्रित हुआ। न्यूटन गणित का प्रोफेसर नियुक्त कर दिया गया। न्यूटन अपनी अनुसन्धान शाला के एक सहायक के साथ नदी की ओर घूमने जाया करता था। नदी एक पहाड़ी के अंचल में बह रही थी। वह उस पहाड़ी की सबसे ऊँची चोटी पर खड़ा हो जाता और पानी की लहरों की ओर देखता रहता। कभी उसकी दृष्टि

सामने चली जाती और दूर तक का नीला आसमान उसकी आँखों में तैरने लगता। प्रकृति पर्यवेक्षण के समय न्यूटन सब कुछ भूल जाता और काफी देर गये वह अपनी वेधशाला लौटता। पता नहीं कौन-सा रहस्य था जो न्यूटन को बेचैन किये था।

रोज की भाँति एक दिन वह उसी पहाड़ी पर खड़ा आसमान देख रहा था। नदी की लहरें भी उसकी दृष्टि को आमंत्रित कर रही थीं। किन्तु न्यूटन ने लहरों की ओर पलट कर भी नहीं देखा। उसके समक्ष दूर तक दिखने वाला आकाश था। दूर का क्षितिज, जहाँ से बादलों का एक ढेर का ढेर चमचमाते सूर्य की ओर बढ़ता आ रहा था। सूर्य पश्चिम की ओर आ गया। न्यूटन वहीं खड़ा रहा। बादलों ने पूर्व की दिशा को ढाँकना प्रारंभ कर दिया। न्यूटन वहीं खड़ा रहा। चारों ओर एक उदासी फैलने लगी। न्यूटन वहीं खड़ा रहा उसकी आँख बादलों के श्यामल रूप पर अटकी हुई थीं। अचानक उसकी आँखों के समक्ष एक सतरंगी धनुष खिंच आया। वह अकबका गया। उसने अपनी आँखें मलीं और फिर उस इंद्रधनुष की ओर देखने लगा। उसे अपनी आँखों पर विश्वास ही नहीं हुआ। उसने अपने सहायक को बुलाया और कहा—

'आकाश की ओर देखो। क्या तुम्हें बादलों के अतिरिक्त कुछ और दिखलाई दे रहा है ?

'हाँ ?' सहायक ने कहा।

'तुम्हें क्या दिख रहा है ?' न्यूटन ने पूछा।

'इंद्रधनुष।' सहायक बोला।

'क्या ?' न्यूटन ने पुनः एक बार दुहराया,

'सतरंगा इंद्रधनुष।' सहायक ने दृढ़ता भरे स्वर में दुहराया। न्यूटन की आँखें चमक उठीं। वह पहाड़ी से उतरता भागा। नदी की लहरें न्यूटन को अपनी संख्याओं का आमंत्रण

दे रही थीं और न्यूटन था कि उसने नदी की लहरों की ओर पलट कर भी नहीं देखा। न्यूटन भागा जा रहा था अपनी अनुसंधान शाला की ओर। अनुसंधान-शाला पहुँचा। उसने रंगों के प्रयोग करना प्रारंभ कर दिया।

न्यूटन ने एक प्रिज्म* किलया और उस प्रिज्म के एक ओर से आने वाली किरणों से पर्दे पर पड़ने वाली परछाँइयों को देखने लगा। परछाइयाँ, परछाइयाँ ही थीं उस पर्दे पर। सतरंगी परछाइयाँ। एक-एक रंग अलग-अलग। सफेद किरण और संख्या भी उसकी एक।एक आकार। एक रूप। श्वेत। केवल श्वेत रंग। इस श्वेत रंग की सतरंगी परछाइयाँ! वह कौतूहल वश और भी प्रयोग करने लगा और उसने पाया कि श्वेत किरण में सात रंग मिले हुए हैं। रंगों के मिश्रण और रंगों के वर्गीकरण का यह सिद्धान्त था। न्यूटन आश्चर्य में डूबा हआ था। समस्त विज्ञान जगत भी न्यूटन के इस प्रयोग को देखकर आश्चर्य में डूब गया। वह प्रिज्म घुमाने लगा। घुमाता गया। तेजी से। और तेजी से। उसने देखा—फिर वही सफेद रंग। सफेद किरण। उसने एक प्लेट ली और उसमें समान दूरी पर सात रंग भर दिये। इस प्लेट को एक घूमने वाली मशीन पर रखकर घुमाया। घुमाने की किया धीरे की तो सातों रंग स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। घुमाने की क्रिया कुछ तेज हो गई। सातों रंग अस्पष्ट होने लगे। धुँधले। एकदम धुँधले। घुमाने की क्रिया अधिक तेज हो गई। सातों रंग गायब! एक ही रंग दिखाई दे रहा था श्वेत रंग। न्यूटन की आँख चमक उठीं। उसे रंगों के सम्मिलन और वर्गीकरण का सिद्धान्त मिल गया। न्यूटन ने प्रयोग जारी रखे। नये-नये रहस्य उसके सामने आ जाते। वह उन

* काँच का एक ठोस त्रिकोणाकार टुकड़ा।

रहस्यों में डूब जाता और विचार करता रहता। उनके प्रयोग करता।

'प्रकाश' पर न्यूटन ने एक शोध निबन्ध भी लिखा और उस निबन्ध के प्रकाशित होने पर विज्ञान जगत ने उसकी इस नई खोज का अधिक कौतूहल के साथ स्वागत किया। न्यूटन की वैज्ञानिक खोजें गौरव की वस्तु थीं, किन्तु उसकी आर्थिक स्थिति दिन प्रतिदिन गिरती जा रही थी। उसे इसकी चिन्ता ही नहीं कि आज के दिन वह क्या खायेगा। उसका भोजन तो नई खोज करने की वृत्ति थी और उसी खोज में उसका सारा जीवन बीतता जा रहा था। न्यूटन ने सौरमण्डल के संबंधों की खोज भी की। पृथ्वी, चंद्रमा और सूर्य की गति पर भी न्यूटन ने विचार किया और गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त पर ही उसने सौरमण्डल की नई व्याख्या प्रस्तुत की। न्यूटन ने सौरजगत के तीन नियमों की खोज भी की थी।

सन् १७०१ में न्यूटन ने प्रोफेसर के पद से त्यागपत्र दे दिया और केन्सिग्सटन में रहने लगा। इसी समय उसका परिचय डेनमार्क के प्रिंस से हो गया। उसने अनेक ग्रंथ लिखे। जीवन के अंतिम वर्षों में वह अधिक बीमार रहा। २० मार्च १७२७ में न्यूटन की मृत्यु हो गई।

बादलों के परदे पर खिंचा हुआ इंद्र धनुष न्यूटन की याद दिलाता है। पृथ्वी, सूर्य और चंद्रमा न्यूटन के जीवन को सामने रख देते हैं। इसी प्रकार रंगों की विविधता भी न्यूटन के विज्ञान-दर्शन की याद करा देती है। वह न्यूटन ही था जो विज्ञान-जगत का कोलम्बस माना जाता है।

———

जिसने पागल कुत्तों से बचाया

पूरी क्लास के सामने पास्चर को शर्मिंदा किया गया। उसकी गल्ती बस इतनी थी के उसने क्लास में शिक्षक से कुछ कठिन प्रश्न पूछे थे। उत्तर देने के बजाय उसे डाँट कर बैठा दिया गया। विद्यार्थी का काम होता है,उत्तर देना,न कि प्रश्न पूछना। इतना ही नहीं, पास्चर के बारे में घर में रिपोर्ट भेजी गई, उस रिपोर्ट में लिखा था कि यह बालक सुस्त, सीधा और ढीला है और उसके भविष्य के सम्बंध में अच्छी भविष्यवाणी की ही नहीं जा सकती।

पर पास्चर अप्रभावित रहता ऐसी छोटी-छोटी घटनाओं से क्योंकि वह तीन सूत्रों पर विश्वास करता था। वे सूत्र थे, इच्छा, कार्य और धैर्य ! इन्हीं सूत्रों पर पास्चर ने स्वतः की उन्नति की और संसार में नाम कमाया।

चमड़े के कारोबार से महान वैज्ञानिक बन जाना—अपने आप में एक बहुत बड़ी घटना है।

स्कूल में और विश्वविद्यालय में भी पास्चर ने शैक्षणिक योग्यता में कोई विशेष प्रगति नहीं दिखलाई और उसकी गणना हमेशा साधारण विद्यार्थियों में की जाती रही। रसायन-शास्त्र में पास्चर ने अंतिम परीक्षा साधारण-श्रेणी में पास की तो उसके पिता ने उससे अच्छी आशाएँ करना छोड़ दिया। ऐसे समय में पास्चर ने बस एक और मौका चाहा।

डाक्टरेट की डिग्री के लिए उसने नाम दर्ज़ करा लिया। घर से पर्याप्त आर्थिक सहायता नहीं आती थी। फिर भी पढ़ाई तो जारी रखनी थी। क्या किया जाए ? इसका हल था केवल

यह कि प्राइवेट ट्यूशनें की जाएँ और पढ़ाई चालू रखी जाए ? कड़ाके की ठंड में सबेरे पाँच से सात तक पास्चर छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों को पढ़ाता और थोड़ा पैसा अर्जित करता।

काफी परिश्रम के पश्चात् पास्चर कुछ रासायनिक पदार्थों को कणात्मक रूप देने में सफल हो गया। पास्चर इसे आकस्मिक खोज कहता था।

पास्चर की जिन्दगी ऐसी ही आकस्मिक खोजों से भरी थी। उसकी इस खोज से खुश हो कर एक प्रोफेसर ने उसे स्ट्रैसबर्ग विश्वविद्यालय में प्रोफेसर की ही नौकरी दिलवा दी। यहीं कुछ दिनों के बाद पास्चर का परिचय विश्वविद्यालय के एक अधिकारी की कन्या से हो गया। भावावेश में उस लड़की के सामने पास्चर ने विवाह का प्रस्ताव रख दिया और अपनी जिन्दगी के इतिहास की झलक दे दी। सौभाग्य से लड़की के माता-पिता इस शादी के लिए तैयार हो गए। और शादी हो गई।

शादी के दिन भी पास्चर अपने किसी प्रयोग में व्यस्त था। वक्त का उसे ध्यान तो था, पर प्रयोग वह बीच में ही नहीं छोड़ना चाहता था।

लुई पास्चर पढ़ी-पढ़ाई बातों पर विश्वास नहीं करता था। प्रत्येक कथन को प्रयोग की कसौटी पर कसता था।

इसीलिए वह रसायन-शास्त्र से जीव-विज्ञान के क्षेत्र में कार्य करने लगा और इस विषय में अग्रणी हो गया।

अरस्तू, वर्जिल आदि वैज्ञानिक मानते थे कि प्राणी किसी निर्जीव पदार्थ से भी पैदा हो सकते हैं।

पास्चर ने उनके इस कथन को चुनौती दी और कहा कि यह तो सम्भव ही नहीं है। उसने कई प्रयोग किए और अपनी खोज की प्रामाणिकता दर्शा दी। तत्कालीन अनेक चोटी के वैज्ञानिकों ने पास्चर को सही बतलाया।

फ्रांस ! रेशम का व्यापार। लाखों रुपयों की आमदनी। पर यह क्या ? इस साल तो सिल्क के कीड़े पैदा होते ही मर जाते हैं। कोई उपाय नहीं उनको जीवित रखने का। बहुत दौड़-धूप की गई, हाथ कुछ लगा नहीं। चारों तरफ परेशानी और घबराहट। व्यापार ठप्प होने का खतरा। ऐसे गाढ़े वक्त में अचानक पास्चर को याद किया गया। पास्चर था नवयुवक वैज्ञानिक। इस समाचार के फैलते ही, उस पर गालियों की बौछार होने लगी। क्या करेगा वह रसायन-शास्त्री ?

गालियाँ पीकर पास्चर कार्य में जुट गया। रात-दिन एक कर डाला। कुछ सूझ नहीं पड़ता था। प्रयोग-पर-प्रयोग किए गए, सोचा गया पर सब व्यर्थ। लोगों में आलोचना होने लगी।

भाग्यवश या दुर्भाग्य-वश पास्चर को लकवा के आक्रमण में कारण खाट पकड़ लेनी पड़ी। यहाँ लेटे-लेटे ही पास्चर सोचता रहता। अचानक एक हल सूझा उसे। यह बीमारी अंडों से शुरू होती है। अंडों को अलग कर दिया जाए और सिल्क के कीड़े उन अंडों से दूर रखे जाएँ। इस छोटी-सी तरकीब पर उसे पहले गालियाँ मिलीं, पर जब उसे व्यवहार रूप में लाया गया तो सिल्क के व्यापारियों को आशातीत सफलता मिली। सिल्क-उद्योग का संकट दूर हो गया। पास्चर का गुणगान वे सब करने लगे, जो कल तक उसे भला-बुरा कहते थे, उस पर असफलता का आरोप लगाने में जरा भी नहीं झिझकते थे। पास्चर की आदमकद प्रतिमा स्थापित की जाने की तैयारी होने लगी। रातों-रात क्या-से-क्या हो गया। एकाएक, जैसे एक बीमारी, दूसरी बीमारी का समाधान लेकर आई हो।

आकस्मिकता का पास्चर के जीवन में अजीब समन्वय था। इसे अद्भुत घटना ही कहा जाएगा कि पास्चर को पौधों की बीमारी के निदान के लिए समय-समय पर याद किया गया।

एक बार फ्रांस में ऐसा भी हुआ कि शराब बनाते समय खमीर में खराबी उत्पन्न हो जाती और शराब का निर्माण उच्च-कोटि का न होने पाता। अच्छी शराब न बनने से शराब के व्यापार को एक बड़े आर्थिक संकट से गुजरना पड़ रहा था।

बड़े-बड़े वैज्ञानिक और विशेषज्ञ हार मान बैठे थे।

पास्चर को सहर्ष स्मरण किया गया। इस चुनौती का सामना पास्चर ने एक बार फिर किया। लगातार प्रयोगों और अवलोकनों के पश्चात् पास्चर ने पाया कि शराब बनाने की खमीर में कुछ छोटे-छोटे कीटाणु उत्पन्न हो जाते थे। इन कीटाणुओं को "बैक्टीरिया" कहा जाता था। पता तो लग गया, पर शराब को बगैर किसी प्रकार की हानि होने देकर, बैक्टीरिया को कैसे नष्ट किया जाए ? पास्चर ने अनेक कीटाणुनाशक द्रव्यों का उपयोग किया। उपयोग अत्यंत सावधानीपूर्वक किया गया। असफलता ही हाथ लगी।

फिर दूसरे प्रयोग किए गए। इन प्रयोगों में पास्चर ने किसी कीटाणुनाशक पदार्थ का उपयोग नहीं किया। शराब की खमीर को विभिन्न तापक्रमों तक गर्म किया गया। गर्म करने के उपरांत उनकी परीक्षा की गई। लगभग ५५° सेंटीग्रेड तापक्रम तक शराब को गर्म करने पर बैक्टीरिया भी मर गए और खमीर में कोई विकार भी उत्पन्न नहीं हुआ। यह एक विचित्र संयोग ही था कि बिना किसी खर्च के लाखों रुपयों की हानि रोक ला गई। इस विधि का नाम भी पास्चर के नाम पर पड़ा।

शराब तो शराब, गर्म करने की यह विधि दूध, क्रीम जैसी वस्तुओं को देर तक उपयोगी रखने के लिए भी काम में लाई जाने लगी और आज तक काम में लायी जाती है।

इस सफलता का पास्चर पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। उसने पास्चर का ध्यान पौधों के रोगों से, मानव जाति के रोगों

की ओर कर दिया। जब पौधों के रोगों में बैक्टीरिया या छोटे-छोटे कीटाणु होते हैं तो क्या यह मनुष्यों के विषय में भी संभव है? यह प्रश्न उसके सामने आ खड़ा हुआ। निरंतर वह इस पर सोचता रहा।

उन दिनों आपरेशन के बाद अधिकांश व्यक्ति काल-कवलित हो जाते थे। कारण का पता न चलता था।

पास्चर ने भी इस विषय पर विचारना प्रारंभ किया। बहुत सोच-विचार करने पर पास्चर ने चिकित्सा-शास्त्रियों की एक सभा में ऐलान किया कि आपरेशन के बाद रोगियों की मौत का कारण अनगिनती सूक्ष्म कीटाणु हैं। ये सूक्ष्य कीटाणु सर्जन के हाथ, हथियारों, कपड़ों, रोगी के घावों, तथा हवा में रहते हैं और घाव पर बैठकर उसे जहरीला बना देते हैं।

फ्रांस की एकेडमी के कुछ सदस्य पास्चर के इस कथन पर खूब हँसे। पर स्कॉटलैंड के एक सर्जन ने पास्चर की इस खोज पर विश्वास करके, यंत्रों और कपड़ों को गर्म पानी में खौलाया, धोया और फिर आपरेशन किया। उसने पाया कि मरने वालों की संख्या में अचानक कमी हो गई है। इस खबर को सुन कर भी फ्रांस के सर्जनों ने इस पर भरोसा नहीं किया और वे पास्चर की हँसी उड़ाते रहे।

अपनी खोज पर पास्चर को पूर्ण विश्वास था और उसने अंत तक इसे आगे बढ़ाने का फैसला किया। कई चिकित्सा-गोष्ठियों में उसने व्याख्यान दिए और अपने विरोधियों के तर्कों को काटा।

नम्र और दृढ़ पास्चर ने काम करना ही सीखा था। इसी गुण का परिणाम था कि वह धीरे-धीरे कठिन समस्याओं को सुलझाने में जुट गया।

कुत्ते के काटने, प्लेग आदि बीमारियों से असंख्य व्यक्ति

मर जाते थे। इस दिशा में पास्चर ने अपने जीवन की सर्वाधिक प्रशंसनीय खोज की।

पास्चर पागल कुत्तों की लार, चूहों और खरगोशों के शरीर में प्रवृष्टि कराता था। उसका यह भी एक प्रयोग था, मनोरंजक, अपने ढंग का निराला और महत्वपूर्ण। पागल कुत्ते की लार को खरगोशों के शरीर में पहुँचाने के विशेष उपाय वह काम में लाता था। खरगोशों को पागल कुत्तों से वह कटवा भी देता था जिससे लार खरगोशों के शरीर में भिद सके।

एक समय एक पागल कुत्ता कटघरे में बंद था। पास्चर ने खरगोश कटघरे में छोड़ दिया। पर कुत्ते ने खरगोश को काटने की कुछ भी उत्सुकता नहीं दिखलाई। वह खरगोश को अब कैसे कटवाता ? बहुत समय व्यतीत हो गया। फिर ?

पास्चर ने अपनी जान का खतरा मोल लेकर अपने मुँह में एक टेस्ट ट्यूब दबाई और कुत्ते से मुँह के पास जाकर उसको लार इकट्ठी कर ली।

एक लड़के को पागल कुत्ते ने काट लिया था। स्थानीय चिकित्सक की सलाह मान कर उसकी माँ, बच्चे को लेकर पास्चर के पास आई। पास्चर तो घबरा गया। उसका मन आगा-पीछा करने लगा। कहीं बीमारी और बढ़ गई तो ? कहीं वह हार गया तो ? किसी के जीवन से और विशेषतः एक बालक की जिन्दगी से ऐसा खिलवाड़ नहीं किया जा सकता।

लेकिन पास्चर ने अपने समस्त जीवन की प्रतिष्ठा दाँव में लगाकर, पागल कुत्ते की लार उस बालक के शरीर में प्रविष्ट कर दी। उस रात पास्चर को नींद नहीं आई। उसका बुरा हाल था। सैकड़ों प्रश्न उसके मस्तिष्क में आ-जा रहे थे। वह बेचैन हो गया। और वह बालक सारी रात आराम से सोता रहा। महीनों बीत गए, पर बीमारा नहीं बढ़ी और धीरे-धीरे

बालक स्वस्थ हो गया। कुत्ते के काटने की दवा पास्चर ने खोज ली थी।

और पास्चर पर सम्मानों और पदवियों की वर्षा की गयी। सारे संसार के प्रबुद्ध व्यक्तियों ने उसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की और उसे मानव जाति का मसीहा कहा।

पर लुई पास्चर इन सम्मानों, प्रशंसा, समृद्धि और यश से निर्लिप्त रहा। न तो उसमें गर्व था अपने किए पर और न झूठा दिखावा।

—o—

योग्यतम ही जियेगा ?

तेहत्तर वर्ष का एक वृद्ध एक बड़े-से मकान के सामने खड़ा होकर दरवाजे पर लगी घंटी बजाता है। थोड़ी देर बाद घर का नौकर बाहर आकर सूचना देता है कि मालिक घर में नहीं हैं। उनके शीघ्र लौटने की कोई आशा नहीं है। पर नौकर बड़े आदमी की आदतें भली-भाँति जानता है। वह शिष्टाचार का महत्व समझता है। फिर वृद्ध बहुत कमजोर दिख रहा है और लगता है वह बेहोश होकर गिर पड़ेगा। प्रार्थना करता है नौकर कि थोड़ी देर आराम कर लीजिए। आगन्तुक नौकर की बात का सम्मान करता है, पर किसी को कष्ट देते हुए उसे दुःख होता है। खुद तकलीफ सहने की उसे आदत है, दूसरों को क्यों सताया जाए ?

लेकिन, वृद्ध काफी कमजोर है। लगता है, अब गिरा, तब गिरा।

अंत में वह घर से चल पड़ता है। अपनी जिन्दगी में उसने आराम करना तो सीखा ही नहीं था। सड़क पर आकर उसने टैक्सी की और घर लौट गया।

मानवता के दुर्लभ आदर्शों और मूल्यों को हर कीमत पर मान्यता देने वाला वह वृद्ध डार्विन, बचपन में पादरी बनते-बनते एक असाधारण घटना के कारण वैज्ञानिक बन गया। जितना विरोध विज्ञान के क्षेत्र में डार्विन का हुआ, उस युग में शायद ही उतना विरोध किसी और वैज्ञानिक का हुआ होगा। प्रारंभ से डार्विन अपनी पैनी दृष्टि और सूझ-बूझ के कारण अपने सहयोयिगों में अग्रणी रहे।

डार्विन का जन्म बारह फरवरी १८०९ को हुआ था। सन १८०९ कई कारणों से महत्वपूर्ण रहा था। डार्विन को इस पर गर्व हो सकता है कि उस साल उसके अतिरिक्त लिंकन, ग्लैड-स्टोन, पो, टेनीसन, ब्राउनिंग, चॉपिन इत्यादि महान् और प्रसिद्ध वैज्ञानिक, राजनीति के आचार्य, लेखकों और कवियों ने जन्म लिया था। इन सभी व्यक्तियों ने अपने-अपने क्षेत्र में खूब नाम कमाया और मानवता की सेवा की। डार्विन ने भी अपने उद्योग, कर्मठता और सतत् प्रयत्न के कारण अपने क्षेत्र में आशातीत सफलता प्राप्त की। वैसे डार्विन के पितामह भी एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे।

बचपन में डार्विन पत्ते, फूल, कीड़े, तितलियाँ और सुन्दर लगने वाले कीड़े विशेषरूप से, सिक्के, चिड़ियाँ, घोंघे, चमक-दार पत्थर के टुकड़े बड़ी आत्मीयता से इकट्ठा करते थे। हाँ, वे ध्यान रखते थे कि कीड़े-मकोड़े जीवित न हों। वे किसी भी प्राणी की हत्या को पाप मानते थे और उनके मन में सभी छोटे-बड़े प्राणियों के प्रति सहानुभूति और स्नेह था।

यह प्रेम उन्होंने "बीगल" पर ही पैदा किया था। उस समुद्री यात्रा के दौरान डार्विन ने अनेक घटनाओं को पास से देखा और समझा। अपनी आँखों के सामने उन्होंने नीग्रो औरतों को पाशविक अत्याचारों से बचकर भागने के प्रयत्न में प्राणों से हाथ धोते देखा। गुलाम नीग्रो नौकरों को मालिकों की सजा सहते, अत्याचार सहते देखा। इन सभी क्रूर घटनाओं का अक्स सा डार्विन के मन पर खिंच गया था। यात्रा से लौटकर डार्विन ने एक किताब लिखी जिसमें अपनी यात्रा के संस्मरणों को कवितामयी भाषा में आबद्ध किया। समस्त पीड़ित मानवता के लिए जन्म-पर्यन्त उनके दिल में अपार प्यार और स्नेह भरा रहा। उन्होंने अपने हरेक प्रयास में इस तथ्य का ध्यान रखा

कि उससे मानव-जाति का सदैव हित हो।

लगातार बीस साल तक अथक परिश्रम करने के उपरांत डार्विन ने "ओरिजिन आफ स्पेसीज़" अर्थात् "जीव-जातियों का उद्गम" पर किताब लिखी। पुस्तक तैयार हो गयी और डार्विन उसे प्रकाशित करने की तैयारी कर रहे थे। यह सन् १८५८ की घटना है।

सबेरे-सबेरे एक दिन डार्विन बरामदे में बठे थे। पोस्टमैन ने उनके हाथ में एक बड़ा-सा पुलिंदा रख दिया। अचरज से भरकर डार्विन ने जल्दी-जल्दी पैकेट खोला। पैकेट खोलते ही उसकी नजर एक बड़ी-सी पोथी पर पड़ी। हाथ से लिखी एक किताब थी। पांडुलिपि का शीर्षक देखकर डार्विन थोड़ी देर के लिए भौचक्का रह गया। अप्रत्याशित-सा जैसे कुछ हो गया। धीरे-धीरे उन्होंने पूरा लम्बा लेख पढ़ डाला। लेख पढ़ने पर डार्विन ने ऐसा महसूस किया कि उसके सारे किये-कराए पर पानी फिर गया हो, बीस साल का परिश्रम एक मिनिट में बेकार हो गया हो, सारी सम्पदा-सी लुट गई हो, अँधेरा-सा छा गया उसकी आँखों के सामने। पर उन्होंने अपने को सँभाल लिया।

डार्विन के ही एक अंतरंग मित्र अल्फ्रैड रसल वैलेस ने उत्पत्ति या "इवोलुशन" पर सर्वथा मौलिक और उत्कृष्ट लेख लिखा था। उसी विषय पर डार्विन भी कार्यरत था और पिछले बीस वर्ष के परिश्रम के बाद उसने ठीक उसी परिणाम को निकाला था, जिसे वैलेस ने खोजा था। यह भी अजीब संयोग था।

वैलेस को क्या पता था कि डार्विन भी उसी विषय पर खोज कर रहा है।

इस संयोग पर डार्विन ने निर्णय किया कि उत्पत्ति की खोज का सम्पूर्ण श्रेय वैलेस को दिया जाए। इस प्रकार का विचार

डार्विन ने एक पत्र में अपने मित्र के सामने व्यक्त किया था।

अंत में किताब छपी और दोनों को उस खोज का श्रेय मिला। इसके पश्चात् डार्विन चुप नहीं बैठे। वे और तेजी से अपनी अन्य खोजों में जुट गए।

डार्विन में सादगी और सरलता कूट-कूट कर भरी थी। अपने सहयोगियों, मित्रों और स्नेहियों के प्रति उनके उद्‌गार बड़े नम्र रहते थे। पेड़ों, घास, लताओं से डार्विन बच्चों जैसे बातें करते थे। लगता था सामने खड़े किसी व्यक्ति से किसी विषय पर साधारण-सी चर्चा कर रहे हों। बच्चों पर जैसे स्नेह लुटा रहे हों।

एक दिन ग्लैडस्टोन, डार्विन से मुलाकात करने आए। दोनों अपने-अपने क्षेत्र में महान् थे, उनकी बराबरी कोई नहीं कर सकता था। बड़ी सरलता से चर्चा होती रही। ग्लैडस्टोन के चले जाने पर डार्विन ने अपने एक मित्र से कहा "ग्लैडस्टोन इतने महान हैं, पर मुझसे इस ढंग से चर्चा करते रहे, जैसे मैं महान् हूँ और वे साधारण हैं। यह उनकी महानता है।"

ग्लैडस्टोन ने भी अपने साथी से उपरोक्त बात कही थी डार्विन के बारे में। उनके विचार से डार्विन की महानता से कोई इनकार नहीं कर सकता, लेकिन वे भी ग्लैडस्टोन से बच्चों-की-सी सरलता से चर्चा करते रहे। एक महान्, दूसरे महान् से शायद ऐसी ही बातें करता है।

डार्विन का जीवन विविधताओं और विचित्रताओं से परिपूर्ण था। अपने बच्चों और स्त्री से उन्हें अगाध प्रम था। उनकी सफलता का श्रेय बहुत कुछ उनकी पत्नी को भी था। पत्नी सदा उन्हें उत्साहित करती रहीं।

अपनी मृत्य के तीन माह पहले वे बहुत बीमार हा गए थे। उनकी पत्नी ने उनकी बड़ी सेवा की और उन्हें धीरज बँधाया।

वे कहा करते थे—"मुझे मृत्यु का तनिक भय नहीं है। वह तो आएगी ही। मुझे चिन्ता है, तो केवल इस बात की कि मैं अपना कार्य आगे बढ़ा नहीं पाऊँगा। मैं तो चाहता हूँ वज्ञानिक अनु-संधान करना। काम में लगे रहना।"

डार्विन की यह कौन-सी खोज थी जिसने सारे संसार के विचारों में क्रांति कर दी? जिसने जीवन के प्रति और साथी मानवों के प्रति दृष्टि ही बदल दी?

इस सिद्धांत के व्यापक प्रभाव पड़े। सोचने का आधार ही बदल गया। यह मान लेने पर कि जो बलशाली है वही जियेगा, निर्बल का जीवन ही व्यर्थ हो जाता है। इस प्रकार शक्ति ही एकमात्र गुण हो जाता है और दूसरों को हराना ही जीवन का ध्येय। डार्विन के सिद्धांत से जहाँ एक ओर जीव-सृष्टि के विकास का रहस्य समझ में आया वहाँ दूसरी ओर बर्बर शक्ति की भी प्रतिष्ठा बढ़ी।

स्वयं डार्विन की समस्त जीवन के प्रति बड़ी आस्था थी। वह हर जीवधारी से प्यार करता था और उसके रहस्यों को जानना चाहता था।

———

क्यूरी दम्पत्ति और रेडियम

ट्रेन की गति क्रमशः धीमी पड़ती जा रही है। हल्के से झटके के साथ ट्रेन रुक गई। जो लोग अपने मित्रों और संबंधियों का स्वागत करने के लिए आए हैं, वे यहाँ-वहाँ जल्दी-जल्दी भाग रहे हैं। कुछ मुसाफिर ट्रेन में चढ़ भी रहे हैं।

एक डिब्बे के सामने बहुत-सी भीड़ जमा है। चेहरे पर गम्भीरता और बड़प्पन के मिले-जुले भाव लिये एक व्यक्ति ट्रेन से उतरता है। उसका नाम है, जैक डैम्पसी। प्रसिद्ध घूँसेबाज। उसका स्वागत किया जाता है।

दूसरे डिब्बे से एक साधारण वेशभूषा वाली और निहायत नम्र नारी उतरती है। उसके स्वागत के लिए वहाँ शायद कोई नहीं है। उसे बर्लिन में भाषण देना है। बस भाषण देने के लिए ही तो वह यहाँ आई है, या यों कहा जाय कि उसे सादर आमंत्रित किया गया है। उस नारी का नाम है, मेरी क्यूरी। विश्व-विख्यात धातु रेडियम को खोज निकालने वाली मेरी क्यूरी।

मेरी क्यूरी की इसी सादगी को देखकर ही तो दूसरे सुप्रसिद्ध, महान्, युगपरिवर्तक वैज्ञानिक आइंसटीन ने कहा था कि संसार में आज केवल एक व्यक्ति है जिसे सम्मान और यश ने भ्रष्ट नहीं किया है, वह है मेरी क्यूरी।

इसी एक घटना को छोड़कर, और सभी अवसरों पर मैडम क्यूरी की प्रशंसा की गई, उनके स्वागत के लिए कतारों में लोग खड़े रहे, सम्मानपत्र दिए गए, बड़ी-बड़ी संस्थाओं में उन्हें नामजद किया गया। प्रेस फोटो ग्राफर, पत्रिकाओं के प्रतिनिधि, रेडियो के कर्मचारी, विश्वविद्यालयों के शिक्षक—सभी उनके पीछे पड़े

रहते। मैडम क्यूरी एक भाषण दे दें, एक लेख लिख दें, एक इंटरव्यू दे दें, एक वार्ता प्रसारित करने की आज्ञा दे दें। पर मैडम क्यूरी इन सबसे अप्रभावित, तटस्थ बनी रहीं। वे कहा करतीं, कि यह हो हल्ला, दिखावा, उत्सुकता चंद दिनों की हैं। फिर सब शान्त हो जाएगा, सब चुप हो जाएँगे।

पोलैंड-निवासी एक सुशिक्षित परिवार में जन्मी इस विदुषी का बचपन का नाम मान्या स्लोडोवस्का था। उसके पिता भौतिक शास्त्र के प्रोफेसर थे। अपने चार भाई-बहिनों सहित मान्या प्रारंभ से स्कूली शिक्षा में निपुण और मेहनती थी। पढ़ाई में दिन-रात एक कर देती। उसकी माता ही उसे पढ़ाई से हटाकर बाहर खेलने भेज देती। इसका कारण था। क्यूरी की माता का स्वास्थ्य बहुत गिर गया था और वे चाहती थीं कि स्वास्थ्य के मामले में इनके बच्चे सावधानी बरतें। शाम को सभी बच्चे मिलकर माँ के स्वस्थ होने की प्रार्थना करना न भूलते। पर जब मान्या सिर्फ दस वर्ष की थी तो उसे माँ का विछोह सहना षड़ा। यह उसके जीवन की एक बहुत बड़ी हानि थी। इसके साथ ही उसके पिता की नौकरी छूट गई थी और सारा परिवार आर्थिक संकट में फँस गया। चार बच्चों के खाने, कपड़े और पढ़ाई का खर्च। उसके पिता इस भार से दबकर तिलमिला रहे थे। पर सहन कर रहे थे।

पोलैंड की भूमि में पैदा हुए वे बच्चे भी पिता के समान बहादुर और परिश्रमी थे। उनमें अपने देश के प्रति सम्मान और गर्व था।

मान्या तब छोटी थी, एक छोटी बच्ची। विद्रोह के बीज तब भी उसमें अँकुरित हो गए थे। वह जिस रास्ते से पढ़ने जाती, उस रास्ते पर उसे एक आदमकद प्रतिमा मिलती। वह प्रतिमा उस व्यक्ति की थी जिसने पोलैंड के प्रति गद्दारी की थी, देश-

द्रोह किया था। बिना भूले मान्या स्कूल जाते समय उस प्रतिमा पर घृणा और क्रोध से थूका करती। कभी चूकती नहीं वह। ऐसा भी होता कि उसे कभी इसका ध्यान न रहता। जब उसे ख्याल आता तो वह पीछे लौटकर आती और उस प्रतिमा पर थूकती। फिर चाहे उसे स्कूल में देर से ही क्यों न पहुँचना पड़े। स्कूल देर से पहुँचने की उसने इस कारण कभी परवाह नहीं की।

स्कूल में मान्या उन शिक्षकों से तनिक भी भयभीत न होती, जो पोलैंड का विरोध करते थे। वह उन विरोधियों का कुछ भी सम्मान नहीं करती और उन्हें घृणा की दृष्टि से देखती थी।

मान्या के पिता ने मान्या को सलाह दी कि कुछ समय के लिए वह आराम कर ले। एक साल की छुट्टी लेकर स्वास्थ्य की ओर ध्यान दे। इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया उसने और पूरे एक वर्ष तक मान्या उपन्यास, कहानियाँ आदि पढ़ती रही। नृत्य में वह रुचि लेती रही और कभी-कभी तो वह रात-रात भर नाचती रहती। न थकान अनुभव करती और न ऊब। नवयुवक उसके साथ नाचने के लिए लालायित रहते। वह किसी को निराश भी नहीं करती थी।

एक वर्ष के पश्चात् मान्या वारसा लौट आई। मान्या और उसकी बड़ी बहन ब्रोन्या दोनों आगे सारबोन में पढ़ना चाहती थीं। सारबोन था पैरिस में। और पैरिस जाने का अर्थ था अटूट खर्च। दोनों पुत्रियों की पढ़ाई के लिए उनके पिता के पास पैसा नहीं था। अजीब स्थिति थी और अध्ययन चालू रखना था ही। इसका हल मान्या ने खोज निकाला।

निश्चय हुआ कि ब्रोन्या विश्वविद्यालय में पढ़ेगी और मान्या नौकरी करके ब्रोन्या की पढ़ाई का खर्च पूरा करेगी। प्रस्ताव स्वयं मान्या का था और ऐसा ही हुआ। मान्या एक निहायत चिड़चिड़ी और क्रूर मालकिन के यहाँ बच्चों को

पढ़ाती, घर का काम करती और बड़ी बहन का खर्च उठाती। बाद में वह एक दूसरे घर में काम करने लगी। दूसरी मालकिन पहली मालकिन से कुछ अच्छे स्वभाव की थी। दिन बीतते जाते।

मान्या के जीवन में, जो दु:ख, दर्द, उत्पीड़न, और परिश्रम से भरपूर था, प्रकाश आया। आशा और प्यार की बोली उसने सुनी। मालकिन का बड़ा लड़का मान्या को प्यार करने लगा था। पर मालकिन से यह सब न देखा गया। वह एक नौकरानीं से अपने पुत्र की शादी कैसे कर सकती थी ?

स्वभाव की नाजुक, संवेदनशील और भावुक मान्या इस वज्रपात को सहन न कर सकी। उसने सपने को चूर होते देखा तो उसे लगा कि अब सिवा आत्महत्या के और अन्य उपाय नहीं हैं। वह दीवारों से सर टकराती और निराशा में डूबी मर जाना चाहती।

लेकिन वह आत्महत्या नहीं कर सकी। यह संकट का पहाड़ भी वह लाँघ गयी। अपमान, लज्जा, निराशा और कुंठा चुपचाप पी गयी।

ब्रोन्या ने डाक्टरी पास करके अपने वचन को पूरा किया। अब ब्रोन्या छोटी बहन की पढ़ाई का खर्च उठाती।

सारबोन ! मान्या का विद्या-मंदिर ! उसकी मनोकामना अंततः पूरी हुई। उसने सारबोन में नाम दर्ज करा लिया। पढ़ाई में वह चौबीसों घंटे लगी रहती। दुनिया में अब उसके लिए कोई आकर्षण नहीं रह गया था। आदमियों से उसे घृणा हो गयी थी। विद्यार्थियों से न मिलती-जुलती और न बातचीत में समय गँवाती।

एक बड़े मकान की छठीं मंजिल पर उसने कमरा किराये पर ले रखा था। अकेले रहना और रूखा-सूखा भोजन खा लेना।

अक्सर वह भी नसीब न होता। वह, कड़ाके की सर्दी में, ठंड से नीली पड़ी अँगुलियों से किताबें थामे, सूत्र हल करती, पढ़ाई में लगी रहती। उसका प्रिय भोजन था, डबलरोटी के टुकड़े, मक्खन और चाय। कभी-कभी भूख और कमजोरी के कारण बेहोश हो जाती। एक बार मान्या को चौबीस घंटे में पर्याप्त भोजन नहीं मिला। भूख के मारे उसका बुरा हाल था। इतने पर भी वह अध्ययन में व्यस्त थी। भूख के कारण जब वह बेहोश हो गयी तो उसकी बहन को सूचना दी गयी और तब रहस्य खुला। कुछ दिनों तक ब्रोन्या के पास रहकर पुनः वह अपने ठंडे, अँधेरे कमरे में आकर पढ़ाई में तन्मय हो गयी।

भूख, थकान, निराशा, कमजोरी को उसने अपने पर हावी नहीं होने दिया। अपने अथक परिश्रम, लगन और एकाग्रता के बल पर मान्या गणित और भौतिकशास्त्र में उच्चतम शिक्षा प्राप्त कर सकने में सफल रही।

अध्ययन समाप्त किया और छुट्टियाँ पोलैंड में व्यतीत कर वह पैरिस वापस आ गयी। पैरिस में मेरी क्यूरी का प्रम एक वैज्ञानिक से हो गया ओर दोनों विवाह-सूत्र में आबद्ध हो गए।

पति-पत्नी फ्रांस के वैज्ञानिक हैनरी बैक्वेरल की एक खोज में संलग्न हो गए। बैक्वेरल ने पता लगाया था कि यूरेनियम के एक यौगिक से एक विशेष प्रकार की किरणें निकलती हैं, जो नरम पदार्थों, जैसे कपड़ा, कागज, मांस इत्यादि को पार कर जाती हैं।

आता कहाँ से है यह पदार्थ ? पदार्थ के रूप, रंग, गुण क्या हैं। ये प्रश्न उन्हें सुलझाने थे।

समस्या का हल अत्यंत कठिन था। तय नहीं हो पा रहा था कि कहाँ से और कैसे शुरू किया जाए कार्य। यही कार्य

इतना बड़ा और महत्वपूर्ण था कि उससे डाक्टर की डिग्री सरलता-पूर्वक प्राप्त की जा सकतो थी।

प्रयोग करने के लिए उन्हें साधारण-सी जगह दी गई। लकड़ी से बना कमरा, जहाँ का तापक्रम बहुत कम रहता था। थोड़े समय बाद पता तो लग गया कि यूरेनियम और थोरियम ऐसे पदार्थ हैं जिनसे खास प्रकार की किरणें प्राप्त होती हैं। इन किरणों में नरम पदार्थों के पार जाने की शक्ति रहती है और ये बहुत क्रियाशील भी हैं।

क्यूरी ने सभी रासायनिक पदार्थों की जाँच कर ली थी और उसका विश्वास था कि इन किरणों की देने वाला अवश्य ही नया पदार्थ होना चाहिये।

यूरेनियम जिस यौगिक से प्राप्त होता था, वह यौगिक कीमती था और कई मन वह काम में आने वाला था। पैसा उनके पास था नहीं। उन्होंने सोचा कि जब यूरेनियम निकाल लिया जाता है, तो वह पदार्थ बच रहता होगा। बस क्या था! ढेर सा वह बेकार पदार्थ, जिससे यूरेनियम निकाल लिया गया था, मँगा लिया गया।

एक रात। भयंकर ठंड। दिन भर काम करके वज्ञानिक दम्पति थक गए हैं। प्रयोगशाला से उठने का मन नहीं हो रहा है। पर देर तक जागने के कारण आँखें बोझल हैं और देह थकी है। बैठने की जगह भी आरामदेह नहीं है। लकड़ी का एक टपरा-सा है, यही उनकी प्रयोगशाला है। डाक्टर ने सलाह दी है, कि मैडम क्यूरी अपने स्वास्थ्य के प्रति लापरवाह हैं। उन्हें कहीं दूर जाकर आराम करना चाहिये। मैडम क्यूरी भला यह सहन कर सकती थीं ? सर पर इतना बड़ा बोझ। शोध-कार्य और ऐसे में आराम !

हारकर रात में विश्राम के लिए दोनों मन न होते हुए भी

चले गए। प्रयोग चालू रहा। जिन पदार्थों से प्रयोग किया जा रहा है, वे वहीं रखे गए।

सुबह दोनों फिर प्रयोगशाला में गए। रात को छोड़े गए पदार्थ से कितनी तेज किरणें निकल रही हैं। दंग रह गए दोनों।

और फिर अनवरत श्रम के बल पर उन किरणों को देने वाला पदार्थ प्राप्त कर लिया गया। एक के स्थान पर दो पदार्थ प्राप्त हो गए। एक का नाम रखा गया "पोलोनियम" और "रेडियम" नाम रखा गया दूसरे पदार्थ का। रेडियम, यूरेनियम से हजारों गुना क्रियाशील था।

इस आविष्कार पर उन्हें नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया था।

नोबल पुरस्कार प्राप्त होते ही प्रेस के प्रतिनिधि उनके पीछे पड़े रहते। कोई फोटो लेना चाहता, कोई इंटरव्यू के लिए लालायित रहता, तो कोई मजेदार घटना जानना चाहता।

मेरी क्यूरी और उनके पति पियरे क्यूरी अत्यधिक शांत, सुशील और निस्पृह थे। सादगी और सच्चाई की तो वे जीवित प्रतिमाएँ थे।

एक अमेरिकन रिपोर्टर कैमरा कंधे पर लटकाए, बड़ा-सा बैग हाथ में थामे, उत्सुक आँखों से एक गाँव में घूम रहा है। उसने सुन रखा है कि इस गाँव में मेरी क्यूरी छुट्टियाँ व्यतीत कर रही हैं।

साधारण-से एक मकान के बाहर, दालान में एक साधारण-सी प्रौढ़ महिला बैठी है, काले कपड़ों में। दुनिया की गर्म खबरों, हलचलों से पूर्णतः अनभिज्ञ-सी, रिपोर्टर उनसे मिलना चाहता था। वह उनके पास गया।

"क्या आप इस घर की नौकरानी हैं ?"

"हाँ।"

"कोई अंदर है क्या ?"

"जी, नहीं, वे बाहर गयी हैं ।"

"क्या उनके जल्दी लौटने की उम्मीद है ?"

"कह नहीं सकती ।"

"आप उनके बारे में कोई खास बात बतला सकती हैं ? पास बैठते हुए रिपोर्टर ने कहा ।

"कुछ भी नहीं"—प्रौढ़ महिला ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया, टालने के स्वर में । फिर जरा रुककर उसने कहा कि इतना ही कहा था मैडम क्यूरी ने मुझसे कि कोई रिपोर्टर आए तो यह कह देना—"व्यक्तियों के विषय में कम उत्सुक रहो, विचारों के बारे में ज्यादा ।"

अमेरिकन रिपोर्टर अपना-सा मुँह लिए चलता बना। उसे क्या मालूम था कि वह और कोई नहीं स्वतः मैडम क्यूरी थीं ।

रेडियम किरणों की खोज से मानवता का बड़ा लाभ हुआ। बड़े कठिन रोगों में, जैसे कैंसर में, इन किरणों से चिकित्सा की जाती है ।

रमन और रमन किरण

घटना १९२१ की है। भारत का एक वैज्ञानिक, वैज्ञानिक अध्ययन के सिलसिले में विदेश जा रहा था। जहाज समुद्र की अपार जलराशि को चीरता हुआ निश्चित दिशा की ओर बढ़ा जा रहा था। जहाज में बैठे हुए यात्री व्यस्त। कोई गीत गाने में और कोई हास्य विनोद में। भारत का यह वैज्ञानिक भी उसी जहाज में था। जहाज के चलने की गति को देखकर उसके मस्तक पर चिन्तन की लकीर डूबती-उभरती जा रही थीं। वह पानी की ओर देख रहा था। पानी से उठने वाली तरंग अत्यंत सुन्दर थीं। सूर्य का प्रकाश उन तरंगों से टकराकर अत्यंत सौंदर्य भरा दृश्य उपस्थित कर रहा था। किन्तु इस वैज्ञानिक को उस सौन्दर्य में भी विज्ञान की सत्ता दिखलाई दे रही थी। लहरों का पानी ऊपर उछलता जाता था और वैज्ञानिक की आँखें तरंगों के निरीक्षण में लगी हुई थीं। तरंगों का रंग नीला था। पानी नीला। वैज्ञानिक चिन्तन कर रहा था। अचानक उसे अपना देश याद आ गया। हिमालय से निकलने वाली गंगा का जल। बंगाल-सागर में भरा हुआ जल। बंगाल-सागर का पानी सफेदी लिए हुए है और भूमध्य-सागर का पानी नीला। यह भेद क्यों ? इस रंग की विविधता ने उस वैज्ञानिक को नया रहस्य प्रदान किया। वह सात वर्ष तक उस समस्या का निदान खोजता रहा और अंत में उसने उसकी विविधता का कारण जान ही लिया। जो प्रयोग रंग संबंधी इस वैज्ञानिक ने किया, उसके कारण विश्व भर में इस भारतीय वैज्ञानिक की ख्याति फैल गई। भारत का यह महान वैज्ञानिक रमन था जो १९२१ में विदेश यात्रा कर

रहा था। आज जब उसका प्रयोग विश्व देखता है तो उसके वैज्ञानिक विश्लेषण से स्तब्ध है। इस सिद्धान्त को 'रमन प्रभाव' के नाम से जाना जाता है। आज भी यह वैज्ञानिक प्रयोग कर रहा है। विश्व की आँखें इस वैज्ञानिक की अनुसन्धान प्रक्रिया पर अटकी हुई हैं।

सर सी० वी० रमन तो आज विश्व के महान वैज्ञानिकों में से एक हैं। कौन जानता था कि संगीत और न्याय शास्त्र का अध्ययन करने वाला रमन विश्व का एक महान वैज्ञानिक होगा।

सी० वी० रमन का जन्म त्रिचनापल्ली में हुआ था। नगर का एक किनारे का पहाड़ी भाग। उस पहाड़ी पर बने हुए एक मंदिर में इस वैज्ञानिक ने जन्म लिया था सन् १८८८ में। १४ वर्ष की आयु में रमन ने एफ० ए० पास किया। बी० ए० की परीक्षा में सर्व प्रथम उत्तीर्ण हुए और भौतिक विज्ञान में उच्चतम अंक मिले। सर्वप्रथम आने के कारण 'अर्णी स्वर्ण पदक' मिला। आगे रमन का अध्ययन-विषय भौतिक शास्त्र था। वह तीव्र बुद्धि के तो थे ही उसके साथ ही नई खोजों की ओर उनका ध्यान सदैव रहता था। एक दिन की बात है रमन अपने महाविद्यालय की प्रयोगशाला में कुछ प्रयोग कर रहे थे। उनका मित्र भी उसी प्रयोगशाला में ही 'ध्वनि' से संबंधित कुछ प्रयोग कर रहा था। प्रयोग सफल होता ही न था। प्रयोगकर्ता प्रो० जोन्स के पास पहुँचा और उसने प्रयोग की कठिनाइयाँ बतलाईं। प्रो० जोन्स ध्वनि की इस समस्या को सुलझा ही नहीं सके। उन्होंने कहा कि लार्ड रेले के 'शब्द विज्ञान' को देखो। रमन को भी इस समस्या का पता लगा। व भी शब्द-विज्ञान को देखने लगे। इस ग्रंथ को देखते-देखते एक नया ही समाधान इस समस्या का सूझ पड़ा और यह प्रथम अवसर था जब सी० वी० रमन ने विज्ञान के क्षेत्र में यह आविष्कार किया। प्रो० जोन्स को जब

इस नये समाधान का पता लगा तो वे आश्चर्य में डूब गये। अधिक प्रसन्न होकर उन्होंने कहा कि चन्द्रशेखर व्यंकट रमन विश्व का एक प्रख्यात वैज्ञानिक होगा।

सी० वी० रमन प्रारम्भ से वैज्ञानिक वृत्ति के थे ही। आगे भौतिक शास्त्र के जो प्रयोग इस महान वैज्ञानिक ने किये, वे भी विश्व को आश्चर्य में डाल देने के लिए पर्याप्त थे। 'रंग' और 'किरण रंग' का एक नया ही प्रयोग इस वैज्ञानिक ने किया और उस प्रयोग ने रमन को विश्वप्रख्यात बना दिया।

सी० वी० रमन प्रिज्म को लेकर किरणों के प्रयोग करते रहते थे। उनका एक वैज्ञानिक अनुसन्धान विश्व के विज्ञान-जगत को नई दिशा प्रदान करने के लिए पर्याप्त था। रमन की वैज्ञानिक खोजों के उपरान्त बहुत-सी भ्रांतियाँ दूर हो गई थीं। 'प्रकाश' पर रमन ने अनेक खोजें की थीं। एक बार व एक प्रिज्म को लिए किरणों का परीक्षण कर रहे थे। उन्होंने अलग-अलग रंग की किरणें तो देखीं ही, इसके साथ ही एक नई किरण का पता भी उन्हें मालूम हुआ। उन्होंने इस नई किरण के संदर्भ में अनेक प्रयोग किये और अन्त में एक ऐसी किरण का पता लगा ही लिया, जिसे विश्व का कोई भी वैज्ञानिक जानता हो न था। इस किरण को रमन प्रकाश (रमन रेज़) के नाम से जाना जाता है। प्रकाश के फैलने की क्रिया के विषय में भी रमन ने अनेक प्रयोग किये। रमन का विश्वास यह न था कि प्रकाश ईथर नामक पदार्थ के कारण फैलता है। प्रकाश उस स्थान में भी फैलता है जहाँ हवा न हो। ईथर हवा में ही निवास करता है। अतएव इस वैज्ञानिक आविष्कार को अधिक प्रसिद्धि तो मिली किन्तु बाद के प्रयोगों ने इस वैज्ञानिक सत्य को अप्रामाणिक सिद्ध कर दिया। सर सी० वी० रमन

उन वैज्ञानिकों में से थे जो ईथर की इस वैज्ञानिक क्रिया पर विश्वास नहीं करते थे।

सर सी० वी० रमन का प्रयोग क्षेत्र 'प्रकाश' था। वे प्रकाश के ही रहस्यों को ऊपर लाना चाहते थे और उन्होंने अपने प्रयोगों के द्वारा इन रहस्यों का उद्घाटन किया भी। भूमध्य-सागर के पानी के नीले रंग को देखकर तथा बंगाल सागर के श्वेताभ रंग को देखकर रंगों की विविधता का कारण खोजना रमन ने प्रारंभ कर दिया था। सात वर्षों तक वे इसके प्रयोग करते रहे और अन्त में उन्होंने इसका कारण खोज निकाला। रमन का कथन है कि जब प्रकाश की किरणें किसी पतले काँच को पार करती हैं उस समय किरणों के परावर्तन के कारण प्रकाश जिस सीमा में फैलता है उसमें तथा जब किसी मोटे, अधिक मोटे काँच को पारकर किरणें परावर्तित होती हैं उस समय प्रकाश की सीमा तथा उनके फैलाव में अन्तर होता है। इसी प्रकार किसी तरल तथा पारदर्शी वस्तुओं को पार कर जब प्रकाश की किरणें परावर्तित होती हैं, उस समय प्रकाश के छितराने का प्रभाव यह होता है कि प्रकाश का रंग परिवर्तित हो जाता है। इस सिद्धांत की खोज करने के लिए रमन को चार वर्ष लग गये, अन्त में प्रकाश के इस रहस्य का उद्घाटन सर सी० वी० रमन ने किया और इस सिद्धान्त को रमन प्रभाव (रमन एफेक्ट) के नाम से विश्व का विज्ञान जगत जानने लगा। पानी के रंगों की विविधता का सिद्धान्त भी यही है।

सारे विश्व की आँख रमन की वैज्ञानिक खोजों की ओर लगी हुई हैं। रमन साहब आज भी वैज्ञानिक आविष्कार करते जा रहे हैं। बचपन से ही सर सी० वी० रमन को संगीत से अधिक प्रेम था। शब्दों की शास्त्रीयता का अध्ययन भी रमन साहब ने किया है। संगीत की ध्वनियों का विश्लेषण रमन

साहब ने अधिक वैज्ञानिक ढंग से किया है। वीणा, मृदंग और तबला आदि विशेष वाद्‌ययंत्रों की ध्वनियों एवं नाद निनादों का वैज्ञानिक अध्ययन रमन ने किया है। ध्वनियों का अनुशीलन एवं ध्वनियों का परीक्षण-रमन साहब ने निरंतर किया है। इससे ध्वनिशास्त्र को भी एक नई दिशा प्राप्त हुई है। रमन ने हलके बादलों पर पड़ी हुई प्रकाश को किरणों, रंगों तथा इंद्रधनुष के रंगों का तुलनात्मक अध्ययन किया था और इस प्रयोग द्‌वारा उन्होंने यह सिद्‌ध किया था कि प्रकाश सरल और पारदर्शक वस्तुओं में से पार होकर ही केवल छितराया नहीं जाता अपितु स्फटिक जैसे दृढ़ एवं ठोस पदार्थों में से भी अणुओं की गति के कारण परावर्तित होता एवं प्रतिक्षिप्त होता है। इसी प्रकार जल के अणुओं का भी विश्लेषण रमन साहब ने किया है। उनका कथन है कि अणुओं के कारण ही प्रकाश परावर्तित होता है एवं रंगों में विविधता आ जाती है। 'प्रकाश' की ही इस नई खोज पर उन्हें नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया है। रमन साहब का वैज्ञानिक जीवन समाजोपयोगी है। वे ऐसे अणु अस्त्रों के निर्माण करने के पक्ष में नहीं हैं, जिनके द्‌वारा विश्व का सर्वनाश हो तथा संसार की सारी प्रगति जड़ हो जाये। दुनिया की प्रगति और विश्वबंधुत्व की भावना को रमन साहब ने समझा है और उनका वैज्ञानिक जीवन आज भी शांति का ही संदेश प्रसारित करता दिखलाई देता है। प्रथम महायुद्‌ध जो १९१४ में हुआ था जिसमें अनेक देश समूह नष्ट हो गये थे। प्रगति और विकास शून्य हो गया था तथा विध्वंस ने विश्व भर की आँखों में ग्लानि और तृष्णा भर दी थी। उस परिस्थिति से भी रमन साहब पूर्ण अप्रभावित रहे हैं। सन् १९३९ के दूसरे महायुद्‌ध ने भी विश्व की मानवता को तहस-नहस कर दिया। अणु अस्त्रों का प्रयोग खूब किया गया।

विश्व की समस्त वैज्ञानिक प्रवृत्ति युद्ध के कार्यों में ही व्यस्त थी। विश्व के महान् वैज्ञानिक अणु अस्त्रों के निर्माण में ही लगे थे, उस समय भी रमन साहब अप्रभावित ही रहे और आज भी विध्वंसात्मक प्रवृत्ति का वे विरोध ही करते हैं। आज का युग अणु-परमाणु युग है और आज भी रमन साहब के वैज्ञानिक सिद्धान्तों को दृष्टिगत रखते हुए इन अणुओं, परमाणुओं को गिन सकना संभव होगा। 'रमन प्रभाव' पर मिलने वाला नोबल पुरस्कार एशिया के सम्पूर्ण विज्ञान-क्षेत्र का प्रथम पुरस्कार था जो कि भौतिक-शास्त्र पर दिया गया था। रमन साहब का सम्मान आज विश्व के महान् वैज्ञानिकों में है।

विश्वशांति और निर्माणकारी वैज्ञानिक वृत्ति के कारण सर सी० वी० रमन को लेनिन पुरस्कार भी प्रदान किया गया है। इस पुरस्कार को प्राप्त करते समय उन्होंने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि यह पुरस्कार मुझे निर्माणकारी वैज्ञानिक के नाते मिला है। मैंने युद्ध की कला के विकास के लिए अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा का उपयोग नहीं किया।

संगीत और ललित कला के प्रति आस्थावान होने के कारण वे प्रकृति पर्यवेक्षण भी करते हैं। प्रकृति की सुन्दरता को देखकर वे मुग्ध हो जाते हैं किन्तु ऐसे समय उनकी वैज्ञानिक वृत्ति सुषप्त होती नहीं। वह अधिक क्रियाशील होती है। फूलों के लाल, नीले, पीले तथा सफेद रंगों को देखकर एवं हरे-भरे मैदानों के सौन्दर्य को देखकर उन्होंने उसका परीक्षण करना प्रारंभ किया। प्रकाश और रंग पहचानने का कार्य हमारी आँखें करती हैं। आँख के केमरे को वैज्ञानिकों ने 'रेटिना' की संज्ञा दी है। रेटिना को देखने के लिए 'वेलमोल्त्ज' ने एक विशेष प्रकार के यंत्र का आविष्कार किया है जिसकी सहायता से इसे स्पष्ट रूप से देखा जा

सकता है किन्तु रमन साहब ने 'रेटिना' को देखने की एक नई विधि का अन्वेषण किया है। इस विधि द्वारा रेटिना' को देखने के लिए किसी यंत्र विशेष की आवश्यकता नहीं होती। डॉ० रमन का प्रयोग यह है कि आँख के आगे यदि एक सफेद पर्दे को प्रकाश युक्त कक्ष में रखा जाये और जब देखने वाले की दृष्टि 'कलर फिल्टर' से प्रभावित हो जाये तब धीरे से वह पर्दा हटा लिया जाये। बिना पर्दे के भी वहाँ रेटिना का एक बड़ा-सा प्रतिबिम्ब दिखेगा। अभी-अभी इन्होंने दूसरा जो नया प्रयोग किया है उसके आधार पर रेटिना के तीन भाग हैं और उनकी सहायता से ही अनेक प्रकार के रंगों का ज्ञान हमें प्राप्त होता है। आँख रंगों को शीघ्र कैसे देखती है। इस पिगमेंट की खोज भी डॉ० रमन ने की है।

आजकल डॉ० रमन बेंगलोर की रमन अनुसंधानशाला में हैं तथा अपना समस्त जीवन उस केन्द्र को ही सम्पन्न बनाने में लगा रहे हैं। विश्व के महान वैज्ञानिक के लिए बेंगलोर तीर्थ स्थान है। इस तीर्थ का दर्शन करना विश्व की मानवता और विश्वशांति का साक्षात्कार करना है।

———

सरल आदमी की कठिन बात

उस सरल आदमी का नाम अल्बर्ट आइंसटीन था। वह बच्चों जैसा भोला था, पर वृहस्पति जैसा ज्ञानी था। बीसवीं शताब्दि के सबसे बड़े इस वैज्ञानिक गणितज्ञ और मानवतावादी ने जिन सत्यों की खोज की, उनमें एक 'सापेक्षता का सिद्धांत' है। यह इतना गहन है कि किसी समय कहा जाता था कि दुनिया के केवल तीन व्यक्ति इसे समझते हैं।

यह कैसा सिद्धांत है ? जिसे बड़े बड़े विज्ञान-शास्त्री मुश्किल से समझते हैं, उसे सामान्य जन कैसे समझ सकता है ?

सिद्धांत चाहे कितना ही कठिन हो वह महान् आदमी बड़ा सरल था। उसके जीवन को समझने का प्रयत्न करना चाहिये।

आइंसटीन यहूदी जाति के थे। ईसाई यहूदी के प्रति अच्छा भाव नहीं रखते क्योंकि यहूदियों ने ईसा को सूली पर चढ़ाया था। इस जाति के अच्छे आदमी को भी ईसाई की घृणा का शिकार होना पड़ता है। हिटलर के जमाने में जर्मनों ने इस जाति पर जो अत्याचार किये, वे कँपा देने वाले हैं। लाखों यहूदी स्त्री, बच्चे बड़ी निर्ममता से मार डाले गये। उन्हें अवर्णनीय यातनाएँ दी गई।

आइंस्टीन भी यहूदी थे। वे ईसाई स्कूल में पढ़ते थे। बाल्या-वस्था में ही उन्हें आभास हो गया था कि वे किसी अपराध के भागीदार माने जाते हैं।

आइंसटीन का शिक्षक एक दिन एक कील लाया और कील उठाकर उसने कहा कि इस कीले से ही ईसामसीह को सूली पर चढ़ाया गया था। कक्षा में उपस्थित समस्त विद्यार्थियों की आँखें

एकाएक आइंसटीन पर घूम गयीं। वह बेचारा घबरा गया और कुछ सूझा नहीं उसे कि उन दर्जनों जोड़े आँखों से कैसे बचा जाए। दुविधा और शर्म के कारण वह बिना एक शब्द बोले कक्षा से सीधे बाहर निकल गया। खुली हवा में उसे चैन आया।

फिर तो आइंसटीन ने सारा समय पुस्तकों में लगाने का निश्चय किया। सैकड़ों साल पुराने वैज्ञानिकों, मनीषियों, कवियों से उसने सम्पर्क स्थापित कर लिया उनकी पुस्तकें पढ़-पढ़ कर। उन पुस्तकों में भी संगीत-जैसी सात्विकता और विविधता थी। अनगिनत रहस्य उनके सामने खुलते जाते।

पर इसी समय उनके पिता पर गाज-सी गिरी। उनका व्यापार चौपट हो गया और सारा कुटुंब म्यूनिक छोड़कर मिलान चला गया। म्यूनिक में रह गया अकेला आइंसटीन, सोलह वर्ष का एक अनुभवहीन बालक।

पिता तो चाहते थे कि उसका बेटा उन्हें व्यापार में सहायता पहुँचाता या इंजीनियर बन जाता। आइंसटीन का मन इस विचार से ही विद्रोह कर उठा। वह न तो व्यापार करना चाहता था और न इंजीनियर बनना। पर दूसरों को समझाया कैसे जाए? अपनी इच्छा व्यक्त कैसे की जाए? वह आगे गणित पढ़ना चाहता था। साधनों के अभाव में उसे अपने उद्देश्य की पूर्ति असंभव-सी लगती थी।

जैसे-तैसे पिता को मना लिया गया और पूरी तैयारी से वह ज्यूरिच पॉलीटेकनिक ऐकेडेमी में भर्ती होने के लिए प्रवेश-परीक्षा में बैठ गया। बैठ तो गया, पर भाग्य ने उसका साथ नहीं दिया और वह असफल रहा। हारा नहीं वह इससे। एकाग्र होकर फिर पढ़ाई में जुट गया और अगली परीक्षा में बैठ गया। इस बार वह सफल रहा और ऐकेडेमी में उसने प्रवेश पा लिया।

भाग्य के इस खेल पर उसे हँसी भी आई और क्रोध भी।

और आइंसटीन अपने से ही पूछता अब, तेरे जीवन का लक्ष्य आखिर है क्या ? और तब बहुत-सी बातें, बहुत-बहुत-सी चीजें सामने आ खड़ी होतीं—अपना घर, अपने माता-पिता, भाई-बहन, अपना गाँव, अपना समाज, अपना देश। और अपनी शिक्षा, अपनी बुद्धि और अपनी लगन के माध्यम से लोक-कल्याण की भावना—ये सभी तो उसके जीवन के अविभाज्य अंग हैं। इनमें से किसको गलत कहे वह ? सभी तो उसके लिए परमावश्यक हैं, सभी के प्रति तो उसका उत्तरदायित्व है।

तब आइंसटीन विकल होकर कहता कि अच्छा-अच्छा सब रहें, सब को लेकर वह चलेगा, सबको सँभालेगा, सबको !

फिर वह अपने से ही पूछता, क्या करूँ ?

उस समय आसपास के चलते-फिरते लोग ऐसे लगते कि वे सब ठीक काम कर रहे हैं। केवल आइंसटीन ही अव्यवस्थित है, केवल वह ही अकर्मण्य है।

वे लोग दुकान जाते हैं, नौकरी करते हैं, स्कूल में पढ़ते-पढ़ाते हैं, पूजा-पाठ करते हैं...कुछ-न-कुछ सब करते हैं...वे सब कृती हैं।

तब आइंसटीन को ख्याल आता कि वह क्यों न अपने पढ़ाई के सर्टीफिकेट का उपयोग करे। वह पढ़ा तो सकता है। पर नौकरी इतनी आसान चीज उसे नहीं लगी। यहाँ-वहाँ भटका, पर नौकरी पर लेने को तैयार कोई नहीं था क्योंकि वह यहूदी था।

और फिर उसे अपनी अकर्मण्यता का ध्यान आता और वह पुनः खोज करने में व्यस्त हो जाता नौकरी की।

अंत में बर्न में उसे साधारण-सी क्लर्की मिली। तब वह मन को समझाता—हाँ, हाँ तुम भी काम के आदमी हो, कर्त्तव्य पूरा कर रहे हो।

क्लर्की तो वह करता ही, साथ ही दूरी और समय के विषय में खोज भी करता। खाली समय में पेंसिल-कागज लेकर तरह-तरह के फारमूले, सूत्र लिखता, गोदता और अपनी एक साथ में पढ़ी लड़की को वह सब दिखाता।

दिन-रात एक करके वह पढ़ता और लिखता। जितना भी उससे हो सकता था, जी तोड़कर परिश्रम किया। और अब यह बात, यह आदत उसकी हर काम में हो गई है। दुनिया के साथ या समाज के साथ, आइंसटीन ने जो कुछ किया था, हृदय से किया था। तभी तो वह अपने अनुसंधान में व्यस्त रहा क्योंकि वह जानता था कि जो कुछ वह कर रहा है, सही कर रहा है। और वह विज्ञान की साधना करता रहा। खोजता और लिखता। विज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए हाथ-पैर पटकता रहा। पहले तो उसकी साधना की कहीं कोई प्रतिष्ठा नहीं हुई। उसे कोई पुरस्कार न मिला। विज्ञान के किसी भी महारथी ने उसकी पीठ न ठोंकी। कहीं उसका फोटो न छपा। उसकी मेहनत का मूल्य न मिला। जो दस-पाँच आदमी उसे जानते थे, उनकी राय थी कि यह साधारण कोटि का प्रतिभाशाली, तरुण वैज्ञानिक है और जानता है अपने विषय को अच्छी तरह।

वह रात को थककर, चकनाचूर होकर लेट जाता तो सोचता कि अब आखिर वह आगे करे क्या? वह कोई प्रसिद्ध विद्वान् नहीं, वह धनी नहीं, यशस्वी वैज्ञानिक नहीं! उन्नति उसने की नहीं, किसी क्षेत्र में उन्नति नहीं की। वह किसी के साथ कुछ भी न कर सका। न उसने भोग-विलास किया, न उसने कभी गौरव पाया, न उसकी कहीं कोई गिनती है।

उसने क्या-क्या सोचा था! कुछ नहीं हुआ!

ठीक ही है। वह बड़ा आदमी न हो सका तो क्या करे? अंतिम कोशिश वह और करेगा।

उसने एक लम्बा-सा लेख लिखा और उसे उस समय की सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक पत्रिका "एनालिन डर फ़िज़िक" में भेज दिया। विनती की उसने उस पत्रिका के संपादक से कि यदि संभव हो तो वह लेख प्रकाशित कर दिया जाए। धड़कते हृदय से उसने डाक से लेख भेज भी दिया।

लौटती डाक से खबर आई कि इसका लेख बहुत अच्छा है और छपेगा पत्रिका में।

उसका लेख प्रकाशित भी हो गया। इसकी वह कृति प्राणों को छूकर हृदय से चिपटकर किसी तरह इस बाह्य जगत् में आ गई। सब दिल में थी, उसकी थी, पर अब तो बाहर है। उसने उत्सर्ग किया था।

और आइंसटीन अब विश्व का हो गया। विज्ञान के हर पारखी, हर पंडित और विद्यार्थी की जबान पर उसका नाम पहुँच कर सबका बन गया था। दुनिया के कोने-कोने में उसकी ख्याति फैल गई, उसका महत्व स्वीकार कर लिया गया।

मामूली-सा क्लर्क अब महान् वैज्ञानिक बन गया, पल भर में, मानों एक रात में ही यह सब उलट-फेर हो गया था!

इस समय आइंसटीन की उम्र छब्बीस साल की थी। इस उम्र में उसने चाँद, तारों, गृहों, उपगृहों का आपसी सम्बन्ध जान-समझकर दुनिया से कह दिया था कि अब तक इनके बारे में जो कुछ भी कहा-समझा गया है, व्यर्थ की बकवास है, मिथ्या है, अस्पष्ट है और वास्तविकता का उसमें लेश भी नहीं है।

सबने अपने दृष्टिकोण रखे हैं। एक चीज विभिन्न दृष्टि-कोणों से देखने पर बिलकुल दूसरी ही वस्तु दिखाई देगी। वास्तव में ये सभी दृष्टिकोण एकाकार किये जाएँ, उन्हें मिला

दिया जाए, तभी सही चित्र बन सकेगा।

स्पिनोज़ा का वह प्रबल समर्थक था।

पर न्यूटन का कतई नहीं। न्यूटन कहता था कि प्रत्येक वस्तु स्थिरता की अवस्था में है। आइंसटीन ने इसका खंडन किया और कहा कि वास्तव में प्रत्येक वस्तु चल रही है, प्रत्येक वस्तु में गति है। पर वस्तुओं की गतियों में आपस में एक सम्बद्धता-सी है, वस्तुओं की गति की तुलनात्मक स्थिति का अध्ययन किया जाता है। हाँ, केवल, प्रकाश की गति स्वतंत्र है। प्रकाश की गति लगभग १ लाख ८६ हजार मील प्रति सेकंड है। यही सबसे अधिक गति है, जो हम जानते हैं। इसी गति को आधार मानकर अन्य वस्तुओं की गति की तुलना की जा सकती है।

गति के अतिरिक्त वस्तुओं में दिशा का ध्यान भी रखा जाता है। यदि एक पत्थर किसी ऊँची जगह से धरती पर गिराया जाय, तो हमें वह पत्थर सीधी रेखा में गिरता दिखाई पड़ेगा। इसी पत्थर को यदि कोई दूसरा व्यक्ति देखे गिरते हुए और वह व्यक्ति पृथ्वी के अलावा किसी अन्य स्थान या ग्रह पर हो, तो उसे पत्थर के गिरने की दिशा गोलाकार दिखाई पड़ेगी।

गति और दिशा के साथ-ही-साथ वस्तु का आकार भी नहीं भुलाया जा सकता। चलने पर या गति के समय वस्तुएँ आकार में छोटी हो जाती हैं।

अत्यधिक तेजी से भागती हुई रेलगाड़ी में बैठा व्यक्ति अनुभव करता है कि रेलगाड़ी की लम्बाई अधिक है। यह उस समय लगेगा जब बाहर खड़ा व्यक्ति भी उसी रेलगाड़ी को देखे। बाहर खड़े व्यक्ति को उसकी लम्बाई छोटी प्रतीत होगी।

गति के बढ़ने के साथ-साथ आकार उसी अनुपात में छोटा होता जाता है। हम एक छड़ी नापें और उसकी लम्बाई एक

गज निकले। यही छड़ी यदि प्रकाश की गति से भागे अर्थात् छड़ी एक सेकंड में एक लाख ८६ हजार मोल की गति से चले और इस स्थिति में छड़ी की लम्बाई नापी जाए तो उसकी यह लम्बाई केवल ० रहेगी। तेजी से भागती उस छड़ी में कोई लम्बाई-चौड़ाई ही नहीं रहेगी।

स्थान और समय की केवल तुलना की जाती है। इनका स्वतंत्र अस्तित्व है ही नहीं। भूत, वर्तमान और भविष्य तो तीन पृथक बिन्दुओं के समान हैं। बम्बई, दिल्ली और कलकत्ता के समान अलग-अलग। जिस तरह बम्बई से दिल्ली जाया जा सकता है, उसी प्रकार आज से बीते कल पर पहुँचा जा सकता है। धरती से बहुत दूर खड़ा कोई व्यक्ति भूत, वर्तमान और भविष्य को अलग-अलग देख सकता है।

यदि प्रकाश की गति से भागना संभव हो सके तो मनुष्य अपनी जन्म-तिथि तक पीछे छोड़ सकता है और उससे भी आगे निकल सकता है। पर व्यावहारिक रूप में यह असंभव है। इससे स्पष्ट है कि समय भी तुलनात्मक इकाई है।

प्रत्येक ग्रह की अपनी खुद की समय की इकाई है। हर ग्रह का समय नापने का अपना अलग तरीका है।

हमने आज रात में एक तारा देखा। पर क्या वह तारा हम ज्यों का त्यों देख रहे हैं ? नहीं। उस तारे से जो किरणें चली थीं, उन्हें हमारी आँखों तक पहुँचने में अरबों साल लगे होंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि वह तारा जैसा अरबों वर्ष पूर्व था, वैसा आज हमने देखा। संभवतः किसी अन्य ग्रह के निवासी हमारी पृथ्वी की घटनाओं को देख रहे हों। तो, यह भी हो सकता है, कि किसी दूर के निवासियों ने आज या कल महाभारत का युद्ध देखा हो। और धरती पर यह युद्ध सैकड़ों वर्ष पूर्व हो

चुका है। धरती का आज या वर्तमान अन्य के लिए कल या भूत हो सकता है।

जिस आइंसटीन को एक समय यूरोप में नौकरी के लिए दर-दर ठोंकरें खानी पड़ी थीं, जिसे यहूदी होने के कारण घृणा की दृष्टि से देखा जाता था, उसी आइंसटीन को ज्यूरिच में प्रोफेसर का पद दिया गया। आइंसटीन को विज्ञान पढ़ाने में कुछ रुचि न थी। उनका मत था कि प्रोफेसर तो सिर्फ तथ्य संग्रह करते हैं, जैसे कुत्ते हड्डी जमा किया करते हैं। शायद ही कोई विरला शिक्षा-शास्त्री होगा जिसके पास कवि-जैसा संवेदनशील और भावुक मस्तिष्क और हृदय होंगे। आइंसटीन का मत था कि वैज्ञानिक या भौतिक-शास्त्री को अपनी खोज में वैसा ही आनंद आता है, जैसा कवि को कविता लिखने में। दोनों ही कवि हैं। उनके इस कथन की हँसी उड़ाने में विज्ञान के पंडित नहीं चूकते थे।

अपने कथन को यह वैज्ञानिक अपने दैनिक जीवन में भी सार्थक करता था। रोजमर्रा के जीवन की बातों में वह बहुत दिलचस्पी लिया करते थे। अपने बच्चे को बाबा-गाड़ी में बैठाकर घुमाने में उन्हें अत्यधिक सुख प्राप्त होता था, इतना सुख उन्हें किसी विश्वविद्यालय में भाषण देने में न आता था।

आइंसटीन पिछली जिन्दगी न भूले थे। अच्छे दिनों में, प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त करने के पश्चात् भी वे क्लर्की के कुछ दिनों को याद करते थे। क्लर्की करते हुए उन्हें समय भी खूब मिलता था और बिना किसी बाधा या बंधन के कारण वे विज्ञान की खोज में अधिक समय दे सकते थे।

किन्तु जीविकोपार्जन के विचार से उन्होंने बर्लिन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बनना स्वीकार कर लिया। रास्ते में पैदल आते-जाते वे सापेक्षवाद के गूढ़ और मनोरंजक सिद्धांत पर ही

सोचा करते। अपनी अधिकांश खोजें उन्होंने चलते-फिरते ही की थीं, सोची थीं।

यह सन् १९१४ की बात है। एकाएक विश्व-युद्ध छिड़ गया। युद्ध के समय किसी का ध्यान आइंसटीन की ओर नहीं गया। उन दिनों वे अपने कमरे में बंद सोचते रहते और सापेक्ष-वाद के विषय में।

एक बार किसी तस्वीर को दीवार में लगाने के लिए वे नसैंनी पर चढ़े। विचारों में वे ऐसा खोए थे कि वे अपने काम को भी भूल गए और धड़ाम से फर्श पर गिर पड़े। यह गिरना न्यूटन की नाशपाती के गिरने के ही समान सिद्ध हुआ। उस गिरने पर आइंसटीन खोज करने लगे।

उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि धरती अपने केन्द्र की ओर वस्तुओं को नहीं खींचती ! न्यूटन का सिद्धांत, कि धरती अपने केन्द्र की ओर सभी वस्तुओं को खींचती है, उन्होंने गलत ठहरा दिया। आइंसटीन ने कहा कि वस्तुएँ उसी दिशा में गिरती हैं, जिस दिशा में उन्हें कम से कम अवरोध का सामना करना पड़ता है।

सापेक्षवाद का सिद्धांत जब सही निकला तो उन्होंने कहा था—"जर्मनी मुझे जर्मन कहेगा और इटैलियन मुझे विश्व-नागरिक बना देगा। अगर मेरा सापेक्षवाद गलत हो जाता तो जर्मनी वाले मुझे यहूदी कहते और इटैलियन मुझे जर्मन कहने में जरा भी न हिचकता।"

आइंसटीन दुनिया वालों के स्वभाव से परिचित थे और मानवीय कमजोरी का वे ज्ञान रखते थे। सफलता प्राप्त होती है, तो समस्त विश्व प्रशंसक बन जाता है। सापेक्षवाद सही निकलते ही उनके यहाँ लोगों का ताँता लगा रहता, पत्रकार, प्रोफेसर, फोटोग्राफर उनके पीछे पड़े रहते। उनका राह चलना

मुश्किल हो गया, कार्य करना कठिन हो चला। इतना समय न मिल पाता कि आगे कुछ और खोज-बीन की जा सके। बायरन-जैसी एक रात की प्रसिदिध ने आइंसटीन के मन पर किसी प्रकार के अहं, विकार, मिथ्याभिमान को जमने नहीं दिया। पत्नी से आइंसटीन मजाक में कहते कि यह तड़क-भड़क, शोर-गुल, विज्ञापन बस चंद दिनों का है। जनता शीघ्र उन्हें भूल जाएगी। लोग बस बात करना जानते हैं, उनके बारे में, उन्हें समझता कोई नहीं।

कोई अभिनेता उन्हें अपना मैनेजर बनाना चाहता, एशिया के जंगलों में जाने वाले उनके मार्गदर्शन की अपेक्षा करते।

एक सिगार बनाने वाली कम्पनी ने एक नये किस्म का सिगार बनाया और उस सिगार का नाम सापेक्षवाद अर्थात् "रिलेटिविटी" रखा।

पर आइंसटीन गौतम या बुद्ध की तरह किसी भी कोटि के सम्मान से निर्लिप्त-से रहे। सभा, पार्टियों में जाते तो पुराने गरम कपड़े पहनते। दिखावे से दूर भागते। नहाने और दाढ़ी बनाने का साबुन एक ही रखते, जिससे किसी तरह का व्यवधान उत्पन्न न हो।

बेलजियम की साम्राज्ञी ने आइंसटीन को आमंत्रित किया था। उनके स्वागत के लिए स्टेशन पर दर्जनों कीमती कारें खड़ी प्रतीक्षा कर रही थीं। वे रेलगाड़ी से उतरे तो उनके एक हाथ में छोटा सूट-केस और दूसरे हाथ में वायलिन थी। भद्रपुरुष आइंसटीन को खोजते रहे, पर कहीं उन्हें रोबीला या महान दिखने वाला वैज्ञानिक नहीं दिखा। हार कर, निराशा से वे सब लौट गए। और आइंसटीन पैदल चल कर साम्राज्ञी के महल पहुँचे। साम्राज्ञी यह देखकर चौंक गईं। वैज्ञानिक ने कह दिया

कि उसे पदल चलना अधिक रुचा। कीमतो कारों की उन्हें परवाह कभी नहीं रही।

जिंदगी में आइंसटीन सदा पैदल चलते रहे। तड़क-भड़क, शोरगुल उन्हें बिलकुल पसंद न थे। धन इकट्ठा उन्होंने कभी नहीं किया और न करना चाहा। बड़े अजीब प्रस्ताव आते उनके पास। सम्पादक लाखों रुपये देना चाहते किसी भी प्रकार के लेख के लिए। ऐसे वक्त वे क्रोध से उबल पड़ते।

युद्धोपरांत आइंसटीन ने अनेक "शत्रु-देशों" की यात्रा की और भाषण दिए, ताकि देशों के बीच मैत्री पुनः स्थापित हो जाए। उन दिनों पेरिस या लंदन में जर्मन बोलना खतरे से खाली नहीं था, तो भी वे अपना भाषण जर्मन में देते और श्रोताओं की सहानुभूति अर्जित करने में पूर्णरूपेण सफल होते।

एक समय एक रूसी के हाथों उनकी हत्या होते-होते बची। जर्मनी का एक वर्ग उन्हें फूटी आँखों न देखता था। उनका नाम ब्लैक-लिस्ट में आ चुका था। यहूदी होने के कारण उनसे घृणा की जाती। इस परिस्थिति में वे चुपके से हालैंड चले गए। वहाँ भी उन्हें चैन न मिला।

पूर्वी देशों की यात्रा आइंसटीन ने की। भारत, चीन, जापान में उन्होंने मानव-जीवन की सच्ची तस्वीर देखनी चाही, पर वे असफल रहे। इस यात्रा के दौरान उन्होंने बच्चों से प्यार करना सीखा। यह सोचकर कि भविष्य के ये नागरिक शायद उनकी भाषा समझ सकें, उनका मन पढ़ सकें, उनके विचारों पर मनन कर सकें।

यह यात्री, दार्शनिक, वज्ञानिक गणित के सूत्रों और वायलिन के साथ फिलस्तीन, स्पेन, दक्षिण अमेरिका गया। अमेरिका पहुँचा।

अमेरिका में पैसिफिक कोस्ट पर नवम्बर सन् १९३२ में

आइंसटीन कुछेक वैज्ञानिकों से वार्तालाप कर रहे थे। उन्हें बताया गया कि हिटलर ने जर्मनी में एक भयानक तूफान पैदा कर दिया है और विश्व में भयानक उथल-पुथल और संघर्ष होने वाले हैं। हिटलर चाहता था कि आइंसटीन उसका साथ दे। पर आइंसटीन ने स्पष्ट रूप में अपनी असहमति बतला दी। नाराज होकर हिटलर ने वैज्ञानिक के सिर के लिए बीस हजार मार्क के इनाम की घोषणा कर दी।

सन् १९३३ में प्रिन्सटन (न्यू जरसी) में उन्हें एक शैक्षणिक संस्था में ले लिया गया। वे उस संस्था के आजन्म सदस्य बनाये गए। वहाँ वे सन् १९४५ तक रहे।

और इस वैज्ञानिक, महान् दार्शनिक, शांति के पुजारी के जीवन में सन् १९३९ में एक ज़बरदस्त मोड़ आया। इस घटना ने उसकी समस्त चेतना, जीवनधारा को एक बारगी झकझोर दिया और उसने शायद उस समय अपने जीवन की सबसे बड़ी, अक्षम्य भूल की।

अपने सहयोगी वैज्ञानिक साथियों के कहने पर आइंसटीन ने तत्कालीन अमेरिकन राष्ट्रपति रुजवेल्ट के सामने एक प्रस्ताव रखा। अणु का विभाजन सफलता पूर्वक कर लिया गया था और अणु-विभाजन का सैनिक-महत्व राष्ट्रपति को बतलाया गया। रुजवेल्ट तो चकित रह गया। उस समय अमेरिका उस खोज से विज्ञान के सारे अनुसंधानों में आगे जा चुका था।

अमेरिकन राष्ट्रपति ट्रूमैन से भी आइंसटीन ने प्रार्थना की थी कि अणु-विभाजन से उत्पन्न होने वाली प्रचंड शक्ति का उपयोग युद्ध या विध्वंसक शस्त्र बनाने के लिए न किया जाए।

पर विज्ञान की हार हुई। राजनीति ने विज्ञान की आत्मा

पर पैर रखकर ऐसा भयानक शस्त्र बनाया जो मानवता के लिए सदा-सदा के लिए अभिशाप बन गया।

हिरोशिमा और नागासाकी में जो विनाश-लीला देखने में आई उसने आइंसटान की आत्मा में गहरे घाव पैदा कर दिए थे। सन् १६४५ का वर्ष उस वैज्ञानिक को बड़ा मँहगा पड़ा।

तब से आइंसटीन विश्व-सरकार के पक्ष में हो गए। सन् १९५५ में उनकी मृत्यु हुई, लेकिन मृत्यु-पर्यन्त उन्होंने एक सुनहला सपना देखा, जिसमें दुनिया की अरबों जनता एक साथ रह सकेगी, जाति-पाँति, काले-गोरे, ऊँच-नीच की क्षुद्रतम सीमाओं का कुछ भी महत्व न रहेगा। मानवता चैन और सुख-शांति का का अनुभव करेगी।

हिरोशिमा के आँसू

सैनिक ने बटन दबाई और एक बड़े जोर का धड़ाका हुआ। उसके साथ ही मनुष्य, पशु-पक्षी सब मृत। जापान का वह पूरा भाग ही नष्ट-विनष्ट। यह हिरोशिमा था। हिरोशिमा पर जिसके द्वारा बरबादी फैलाई गई थी, धन-जन को बिलकुल बरबाद कर दिया गया था, वह एक अणु-शक्ति के द्वारा। उस अणु-शक्ति से जो बम तैयार किया गया था वह था 'एटम बम।'

एटम की शक्ति अपार है। निर्माणकारी और विनाशकारी भी। वैज्ञानिकों ने एटम की शक्ति का परिचय अणु से पाया था। तत्व को यदि सूक्ष्म से सूक्ष्म खण्डों में विभाजित कर लिया जाये, तो सबसे छोटा खण्ड 'अणु' कहलायेगा। आज के वैज्ञानिक ने अणु के भी खण्ड-खण्ड किये हैं और परमाणु की खोज की है। इस तथ्य की खोज सबसे पहिले आइंसटीन ने की थी। उसके पश्चात् तो सभी देश इसकी खोज में ही लग गये। जर्मनी ने खोज की अणु की। इंग्लैण्ड ने भी खोज की अणु की। और अमेरिका ने खोज की अणु की सर्व-नाशी शक्ति की। इन देशों के वैज्ञानिकों ने अणु की खोज तो की, किन्तु उसका स्वरूप निश्चित नहीं कर पाये। खोज जारी रही। अणु को तोड़ने के प्रयत्न चलते रहे। वैज्ञानिक सोच रहे थे कि अणु को तोड़ने का फार्मूला मिल जावे और फिर उसका उपयोग जन-जीवन की भलाई के लिए हो। सैनिक सोच रहे थे अणु को तोड़ने की विधि मिल जाये फिर तो अन्य देशों की पराजय ही पराजय। विनाश ही विनाश। अंत में प्रयोग सफल हुए। आखिर उस अणु में क्या

है जो वर्गीकृत होकर शक्ति उत्पन्न करता है। अंत में वैज्ञानिकों ने अणु को तोड़ने का कार्य प्रारंभ किया।

वैज्ञानिकों ने देखा कि अणु को भी अनेक खण्डों में तोड़ा जा सकता है। वैज्ञानिकों ने कहा कि अणु में बहुत-से इलेक्ट्रान और प्रोटान रहते हैं। ये तत्व आपस में चिपके रहते हैं। जिस वस्तु के सहारे ये आपस में चिपके रहते हैं, वह एक शक्ति होती है। यदि इन तत्वों को अलग-अलग कर दिया जाये तो आसपास अद्भुत, अपार शक्ति फैलती है। शक्ति के इस विस्तार को देखते हुए वैज्ञानिकों ने अणु-शक्ति को तोड़ने और उसे उपयोग में लाने के अनेक प्रयोग किये। वैज्ञानिकों की दृष्टि अणु को तोड़ने में लगी थी।

जर्मनी, इंग्लैण्ड और अमेरिका के वैज्ञानिकों ने अणु को तोड़ लिया और अणु-शक्ति की खोज की। वैज्ञानिक सोच रहे थे कि इस शक्ति का प्रयोग वे रचनात्मक कार्यों में करेंगे। बड़ी-बड़ी शक्तियाँ उत्पन्न होंगी। बड़े-बड़े कल-कारखाने चलेंगे। उन कारखानों में लाखों मजदूर कार्य करेंगे। वस्तुओं का उत्पादन बढ़ता जायेगा। चारों तरफ होगी खुशहाली; अपार आनंद! यह वैज्ञानिकों का स्वप्न था। इस स्वप्न को साकार करने के लिए देश-देश के वैज्ञानिक परीक्षण कर रहे थे। हजारों लाखों गुना उत्पादन बढ़ाने की चिन्ता वैज्ञानिकों की थी। वे भू पर ही पूर्णता का स्वर्ग बसा देना चाहते थे। किसी के मन में यह भावना भी न थी कि यह शक्ति संहारक भी हो सकती है। अमेरिका में यह प्रयोग सफल हुआ। अमेरिका के वैज्ञानिक ने अणु-शक्ति का उत्पादन किया। 'इलेक्ट्रान' और 'प्रोटान' को अलग-अलग कर लिया। अपार शक्ति चारों तरफ फैल गई। वैज्ञानिक की आँखें चमक उठीं।

घटना १९४५ की है। अमेरिका के वैज्ञानिक के समक्ष बड़ी

कठिनाई उपस्थित हो गई, वह इसका परीक्षण कैसे करे। जापान और जर्मनी के ध्वंसात्मक हमले समाप्त थे पर फासिस्ट जापान सारे विश्व में अशांति फैला रहा था। आखिर अणु-शक्ति का प्रयोग रचनात्मक कार्यों के लिए नहीं हुआ। उससे विनाशकारी, अत्यंत विनाशकारी बम बनाये जाने लगे। वही बम, जिसने हिरोशिमा को बरबाद कर दिया था। एक दम विनष्ट। धन-जन, पेड़, पशुओं से शून्य—ऊजड़, एक दम वीरान !

हिरोशिमा के विनाश को देखकर अमेरिका के वैज्ञानिक ओपन हेमर की आँखो में अणुशक्ति के प्रयोग-परीक्षण की प्रथम घटना का चित्र तैरने लगा।

एटम बम का प्रथम परीक्षण अमेरिका ने ही किया। एक ऊजड़ स्थान में। दूर तक फैले हुए रेगिस्तानी पहाड़ियों में ऊजड़ पहाड़ी का एक भाग। बहुत ऊँचा। इस पहाड़ी पर सौ फीट ऊँची स्टील की मीनार एक दम सीधी खड़ी थी। आकाश को छूती हुई। इस पहाड़ी से ९ मील दूर वह वैज्ञानिक बैठा था, एक ऊँची इमारत के एक भाग में। उसके साथी भी वहीं बैठे थे। सभी की आँखों में रंगीन चश्मे थे। फौजी अफसर भी वहाँ थे। वे वैज्ञानिक की ओर बड़ी जिज्ञासा भरी दृष्टि से देख रहे थे। उन्हीं आँखों में उल्लास भी था, किन्तु उनकी आकृतियाँ भय से भी भर गई थीं। सभी एक दूसरे को देखते थे। कभी अपने साथियों की ओर और कभी वैज्ञानिकों की ओर। वैज्ञानिक अपने यंत्रों पर कार्यरत् थे। वैज्ञानिक ओपन हेमर भी उस अणु बम के परीक्षण के लिएवहाँ बैठा था। शायद यह प्रथम परीक्षण था, इसलिए उसकी आँख अडिग विश्वास से चमक रही थीं। वह अणु शक्ति का परीक्षण करने जा रहा था। ५॥ बजने में अभी कुछ मिनिटों की देर थी। चारों तरफ एक हलचल थी। एक भयभीत वातावरण। केवल वैज्ञानिक ही ऐसे थे जो निर्भीक

और अदम्य विश्वास के साथ कार्यरत थे परीक्षण खतरनाक था। ओपन हेमर सोच रहा था। घड़ी का काँटा धीरे-धीरे खिसकता जा रहा था और सबकी दृष्टि एकदम वैज्ञानिक की अंगुलियों की ओर केन्द्रित होती जा रही थी। ४५ सेकेण्ड ५॥ बजने के लिए शेष थे। ३० सेकेण्ड बचे। २० सेकेण्ड। और देखते ही देखते वैज्ञानिक ने अपनी अंगुली से मशीन का बटन दबा दिया। इस स्थान से उस ऊजड़ पहाड़ी पर लगी हुई स्टील की मीनार तक तारों का जाल बिछा था और जगह-जगह 'रोबट' खड़े कर दिये गये थे। रोबटों की आकृति ठीक मनुष्य की तरह थी। वैसे ही हाथ पैर। वैसा ही रूप। वे स्टील के बने थे। बटन दबी कि पहिला पुतला चला। उसने दूसरे पुतले को चलाया। दूसरे ने तीसरे पुतले को। तीसरे ने चौथे को। इस तरह एक के बाद एक 'रोबट' चलने लगे। दर्शकों की आँखें उन पर जमी हुई थीं। प्रयोग खतरनाक था। पुतले चले। दूर तक वैज्ञानिकों और फौजी अफसरों की दृष्टियाँ भी फैलती गईं। दूरबीन से सभी देखते जा रहे थे। अंतिम पुतला भी चला। अंतिम ! बिलकुल अंतिम !! मीनार से बहुत तीव्र प्रकाश निकला। ज्योति की एक लहर। पूरा आकाश और आस-पास का सारा वातावरण चौंधिया गया। सूर्य का प्रकाश धीमा लगने लगा। उस विस्फोट का प्रकाश सूर्य के प्रकाश से भी अधिक था। हजार गुना अधिक। देखते-देखते थोड़ी ही देर में इतनी तेज आँच सारे वातावरण में फैली की लोग कराह उठे। क्रन्दन सुनाई पड़ने लगा। इधर वैज्ञानिक की आँखें निराशा और उदासी में डूबी जा रही थीं, उधर फौजी अफसर प्रसन्न हो रहे थे। सारे विश्व की विजय उनकी आँखों में तैरने लगी थी। कुछ देर बाद फिर एक जोर का धड़ाका हुआ। इतना तेज धड़ाका कि कान के परदे फट जायें। हजारों बिजलियाँ जैसे एक साथ कौंधी हों। इसके

बाद वैज्ञानिकों और फौजी अफसरों ने देखा कि आसमान में कुकुरमुत्ते के आकार का एक सुन्दर-सा छोटे-छोटे बादलों का समूह उठा। सभी आश्चर्य में डूब गये। वैज्ञानिक को तो विस्मय था अपने परीक्षण के परिणाम का और फौजी अफसरों को विजय का उल्लास अभी से हो रहा था। वे सभी टेंकों में बैठ-कर उस मीनार की ओर गये। मीनार दिखी नहीं। सौ फीट ऊँची स्टील की मीनार अदृश्य। एकदम गायब। जमीन की ओर देखा तो मिट्टी भी ग़ायब। रेत काँच के रूप में परिवर्तित हो गई थी। गहरे नीले काँच के रूप में। चारों तरफ काँच ही काँच बिछा दिखाई दे रहा था। आसपास के वातावरण में न पेड़ थे न पौधे। और दूर चलने पर देखा कि पशु, पक्षी मरे पड़े हैं। वैज्ञानिकों ने इसे देखा। उनके चेहरे उदास हो गए। निराशा की एक स्याह लकीर उनके मस्तकों पर खिंच गई। प्रधान वैज्ञानिक ओपनहेमर ने अपना सिर पकड़ लिया था और वह चिल्ला रहा था कि मैं सर्वनाशी हूँ। इस युग का काल! इस सभ्यता और संस्कृति का काल! मैं महाकाल! महा-काल!! और वह निराश हो गया था। उधर फौजी अफसर प्रसन्न थे। विश्व-विजय की कल्पना साकार हो रही थी।

रचना और विध्वंस! वैज्ञानिक ने यह सोचा ही नहीं था कि उसकी शक्ति सैनिक छीन लेंगे। रचनात्मक कार्यों के उद्‌देश्य से ही उसने अणुशक्ति की खोज की थी और उसे ही ध्वंसात्मक कार्यों में लिया जाने लगेगा। ओपन हेमर यह सोच-कर ग्लानि से तड़प उठा।

और वह सोचता था कि विश्व में ध्वंस करने के लिए विजय की लालसा से ये वैज्ञानिकों को बंदी बना लेंगे और अणुबम बनवायेंगे। यह सारी कल्पना ओपन हेमर के दिमाग में आई और उसने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। उसने कहा

अपने राष्ट्र से कि वह अणुशक्ति का रहस्य सभी देशों के वैज्ञानिकों को प्रकट कर दे किन्तु अमेरिका ने स्वीकार नहीं किया। उसने ओपन हेमर को देशद्रोही करार दे दिया।

और जब हिरोशिमा पर पहिला अणुबम गिरा तब ओपनहेमर की आँखों में आँसू भर आये। वह पछतावा करने लगा कि उसके हाथ से कैसा विध्वंस का अस्त्र तैयार हो गया।

पर अमेरिका में ही अणुशक्ति की गोपनीयता सुरक्षित नहीं रह पाई। अन्य देशों के वैज्ञानिकों ने अणु-परमाणु का वर्गीकरण किया और उसका परिणाम यह हुआ कि अनेक देशों में अणु बम, हाइड्रोजन बम आदि बनाये जाने लगे। रूस ने बनाया, बिट्रेन ने बनाया, फ्रांस ने बनाया। अनेक देशों ने अणुबम तैयार किये और वे सर्वनाश के किनारे पर खड़े हो गये हैं।

आज विश्व दो गुटों में बँट गया है। विनाश के एक छोर पर एक गुट खड़ा है और दूसरे छोर पर दूसरा गुट। यदि अणुबम का प्रयोग किया गया तो सभ्यता और संस्कृति नष्ट हो जायेगी। हरी-भरी फसलें, पशु-पक्षियों की चहल-पहल और कल-कारखाने सभी मिट जायेंगे। विनाश की कल्पना और आज के दृश्य की कल्पना ओपन हेमर ने पहिले ही कर ली थी और इसी कल्पना ने उस वैज्ञानिक की आँखें सजल कर दी थीं।

———

पहली अंतरिक्ष यात्रा

मनुष्य पृथ्वी पर रहता है, पर शुरू से ही उसकी इच्छा आकाश में उड़ने की रही है। वह जानना चाहता है कि ये चमकते ग्रह-नक्षत्र कैसे हैं, इन पर प्राणी रहते हैं या नहीं, चाँद कैसा है; सूर्य कितना बड़ा है। वह रहस्यमय आकाश को देखता रहा है और सोचता रहा है कि इस नीले पर्दे के उस पार कहाँ क्या है। मनुष्य जहाँ नहीं जा पाता, वहाँ उसकी कल्पना जाती है। कुछ लोगों ने कल्पना की कि आसमान के उस पार स्वर्ग-लोक है; वहाँ देवता रहते हैं; वहाँ बारहों महीने वृक्ष फल देते हैं; वहाँ कोई बूढ़ा नहीं होता। इसी तरह आकाश में उड़ने की कल्पनाएँ हैं। भारत में यक्ष, गंधर्व आदि की कितनी ही कहानियाँ प्रचलित हैं। ये यक्ष-गंधर्व चाहे जिस लोक में उड़ते फिरते थे। नारद पृथ्वी और स्वर्ग के चक्कर लगाते रहते थे।

भारत में ही नहीं, अन्य देशों में भी लोग ऐसी कल्पनाएँ करते रहे हैं। एक यूनानी लोक कथा के अनुसार इकेरस ने पंख बनाये और उन्हें मोम से चिपकाकर उड़ा। उड़ते-उड़ते वह सूर्य के पास पहुँच गया। सूर्य के ताप से मोम पिघल गया और पंख उखड़ गये। इकेरस पृथ्वी पर गिर पड़ा।

जूल्स वर्न ने बहुत पहिले एक पुस्तक लिखी थी—"राउन्ड द' अर्थ इन एटी डेज़" (८० दिनों में दुनिया की परिक्रमा)। इसमें एक आदमी एक बड़ा-सा गुब्बारा बनाकर उड़ता है और दुनिया के चक्कर लगा आता है।

विज्ञान ने कई सपने सच कर दिये। हवाई जहाज का निर्माण हुआ और मनुष्य की उड़ने की इच्छा पूरी हुई। पर

मनुष्य और ऊपर जाना चाहता था। साधारण हवाई जहाजों से इतने ऊपर जाना सम्भव नहीं है।

ऊपर, बहुत ऊपर जाने में कई कठिनाइयाँ हैं—ऊपर हवा पतली हो जाती है, फिर हवा होती ही नहीं है। एक ऊँचाई पर पृथ्वी की आकर्षण शक्ति समाप्त हो जाती है और वहाँ किसी वस्तु का कोई वज़न नहीं होता। ऊपर की हवा, ताप आदि भिन्न हैं। एक तो ऐसा हवाई जहाज बनाना ही एक समस्या थी। फिर उसे इतने ऊपर उछालना और फिर एक नियमित मार्ग पर चलाकर फिर वापिस पृथ्वी पर उतार लेना तो और बड़ी समस्या थी। उसमें किसी जीवित प्राणी को भेजना तो असम्भव ही लगता था।

पर वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति इतनी तीव्र गति से हुई कि ऐसा हवाई जहाज बन गया। उसमें पहिले कुत्ता भेजा गया और एक दिन सारे संसार ने आश्चर्य से सुना कि एक मनुष्य ऐसे हवाई जहाज में बैठकर पृथ्वी की परिक्रमा करके सकुशल वापिस आ गया।

यह मनुष्य है यूरी गेगरिन; रूस का नागरिक। १२ अप्रेल १९६१ को वह सोवियत वैज्ञानिकों द्वारा निर्मित एक विशेष प्रकार के अन्तरिक्ष यान में बैठकर उड़ा और सारी पृथ्वी की परिक्रमा करके सकुशल पृथ्वी पर उतर आया।

यह विज्ञान का अदभुत चमत्कार था। इससे अब यह असम्भव नहीं प्रतीत होता कि एक दिन मनुष्य चन्द्रमा तथा अन्य ग्रहों पर भी पहुँच जायगा; इन ग्रहों से हमारा आवागमन का सम्बन्ध हो जायगा।

जिस अंतरिक्ष यान में गेगरिन ने यात्रा की उसकी बनावट चकरा देनेवाली है। इस यान का नाम 'वोस्टक' है। इस यान के एक भाग में तो कई तरह के यन्त्र थे और दूसरे में यात्री के

बैठने का प्रबन्ध। सारे यन्त्र स्वचालित थे और पहिले से निश्चित किए गये कार्यक्रम के अनुसार स्वयं कार्य करते थे। इसमें ऐसे यन्त्र थे जो ताप को संतुलित रखते थे। एक यन्त्र यान की गति को नियन्त्रित करता था। ऐसे यन्त्र लगाये गये थे जो नियत समय पर यान को आसानी से धरती पर उतार लायें। यान में रेडियो और टेलीविज़न की व्यवस्था भी थी। गेगरिन वहाँ से संदेश भेज सकता था और पृथ्वी से संदेश पा सकता था। मास्को में प्रयोग शाला में बैठे वैज्ञानिक गेगरिन को आदेश देते जाते थे और वह वहाँ से अपने समाचार तथा अंतरिक्ष सम्बन्धी सूचनाएँ देता जाता था। टेलीविज़न के द्वारा गेगरिन का चित्र प्रयोग शाला में दिखता था। ऐसे यन्त्र लगाने गये थे जिनसे यात्री के हृदय और नाड़ी की गति प्रयोग शाला में मालूम होती जाय। इस साधन से हर क्षण गेगरिन के स्वास्थ्य की स्थिति ज्ञात होती रहती थी।

ये यन्त्र स्वचालित थे, पर आवश्यकता पड़ने पर गेगरिन स्वयं इन यन्त्रों को चला सकता था और अपने यान का स्वयं नियन्त्रण करके उसे इच्छानुकूल चला सकता था। उसके कक्ष में भोजन और पानी का काफी प्रबन्ध था और उसकी कुर्सी ऐसी बनाई गई थी कि वह बिना अपनी जगह से उठे सब कार्य कर सकता था। उसके कक्ष में तीन छेद थे जिनसे वह बाहर देख सकता था। छेद से उसे पृथ्वी दिखती थी।

यात्री की रक्षा के लिए अधिक से अधिक सावधानी बरती गई थी। यंत्रों से वातावरण अनुकूलित होता था। आवश्यक प्राणवायु मिलती थी; तीव्र गति के घर्षण से रक्षा का प्रबंध किया गया था। यदि किसी कारण कोई यंत्र काम न करे तो यात्री की सुरक्षा के लिए साधन तैयार थे। यदि यान अनियंत्रित हो जाय तो एक बटन दबाते ही उसकी कुर्सी अलग हो

सकती थी; पैराशूट अपने आप खुल जाता और वह सकुशल उतरने का प्रयत्न करता।

यात्रा के लिए वर्षों से तैयारी हो रही थी। प्रयोगशाला में अंतरिक्ष यान तैयार हो रहा था। अंतरिक्ष यान ऐसा बनाया गया जिसमें यात्री को अधिक से अधिक आराम मिले और दुर्घटना की कोई आशंका न हो। उसमें ऐसे यंत्र लगाये गये थे, जो यात्री के बिना हस्तक्षेप के स्वयं ही सब कार्य कर लेते थे जैसे प्राणवायु की तनिक-सी कमी होने पर यात्री के बिना प्रयास के अपने आप प्राणवायु वहाँ रखे रसायनों से बनने लगती थी। ताप जितना आवश्यक होता उतना ही रहता था। हवा शुद्ध और छनकर आती थी। सघन वायुमंडल से, घर्षण से उत्पन्न ताप से, बचाव के लिए यात्री के कक्ष के आसपास एक विशेष कार की चादर मढ़ी गई थी।

इस यान को वातावरण में ऊँचा उछालने के लिए बहुत शक्तिवान राकेटों का निर्माण किया गया था।

यात्रा की तैयारी भी महीनों से चल रही थी। अनेक उत्सुक युवकों की परीक्षा और डाक्टरी जाँच की गई। अंतरिक्ष यात्री का स्वास्थ्य बहुत अच्छा होना चाहिये। उसे साहसी और तीव्र बुद्धि होना चाहिये, जिससे वह घबड़ाये नहीं और मौका पड़ने पर स्वयं यंत्रों को चला सके।

यूरी गेगरिन का जब चुनाव हो गया, तब उसे महीनों विशेष प्रकार का भोजन दिया गया। प्रयोगशाला में उसे उन सब स्थितियों का अभ्यास कराया गया, जो अंतरिक्ष में उसके सामने आतीं। उसे बहुत तीव्र गति से चक्कर लगानेवाले छोटे कक्ष में बिठाकर अभ्यास कराया गया। अपने यान के हर यंत्र का उपयोग करने की उसे शिक्षा दी गई। उसे दिखाया गया कि यदि यंत्रों में खराबी आ जाय, तो उसे कैसे अपने यान को नीचे

उतार लाना चाहिये या उससे बाहर निकलकर पेराशूट के सहारे उतरने का प्रयत्न करना चाहिये ।

सब तैयारी पूर्ण हो चुकी । १२ अप्रैल को गेगरिन विशेष प्रकार के कपड़े पहिनकर यान में अपनी कुर्सी पर बैठ गया । अंतरिक्ष यान को छोड़ने और संचालित करने के लिए एक से अधिक रॉकेटों का उपयोग किया गया था । पृथ्वी पर से एक रॉकेट द्वारा यान वातावरण में ऊँचे उछाला गया । जब वह पृथ्वी की आरबिट (Orbit) में पहुँचा, तब दूसरे रॉकेट ने उसे ढकेला और गति दी । वह बड़ी तीव्र गति से स्वचालित होकर उड़ने लगा । वैज्ञानिकों ने हिसाब लगा लिया था कि कितने समय में वह पृथ्वी की परिक्रमा लगा लेगा । ठीक उतना समय समाप्त होने पर एक रॉकेट अपने आप चलकर उसकी गति मंद कर देगा और यान धीरे-धीरे पृथ्वी पर उतर आयगा ।

यूरी गेगरिन ने पृथ्वी पर लौटने के बाद कहा, 'एक स्थिति भारहीनता की आई । किसी भी वस्तु में वजन नहीं रहा । मेरे हाथ पैरों में कोई वजन नहीं रहा । या सब पदार्थ हवा में तैरने लगे । मैं स्वयं जगह पर बैठा नहीं रह सका, बल्कि कुर्सी से उठकर हवा में लटक गया । ऐसी स्थिति में मैंने अपने अनुभव नोट बुक में लिखे । लिखने में कोई कठिनाई नहीं हुई, पर मुझे कलम कसकर पकड़ना पड़ा और नोटबुक दबाकर रखनी पड़ी, अन्यथा वे उड़ जाते ......धीरे-धीरे मैं पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के दायरे में लौटा और फिर सब चीजों में वजन हो गया और मैं फिर अपनी कुर्सी पर बैठ सका ।'

गेगरिन अपने यान से निरंतर पृथ्वी से सम्पर्क बनाये रहा । वह रेडियो के द्वारा अपने देश की प्रयोगशाला में संदेश भेजता

रहा। वह बताता रहा कि मैं अब कहाँ हूँ और मेरी हालत कैसी है। उसने बाद में कहा, 'मैं ऊपर से पृथ्वी को भली भाँति देख सकता था। मैंने ऊपर से अंडाकार पृथ्वी को देखा। मुझे खेत, नदियाँ और पहाड़ भी दिखते थे। क्षितिज बहुत सुन्दर लगता था। सूर्य की गर्मी कई गुनी लगती थी। तारे पास और साफ़ दिखते थे। आकाश बिलकुल काला दिखता था। कभी-कभी सूर्य की किरणों के प्रभाव से अंतरिक्ष में कई प्रकार के रंग दिखते थे।'

गेगरिन ने अंतरिक्ष के संबंध में बहुत-सी नई बातें जानीं और उन्हें वैज्ञानिकों को बताया। यान में जो यंत्र लगे थे, उन्होंने भी अपने आप बहुत-सी जानकारी इकट्ठी की। जब यान पृथ्वी की परिक्रमा कर चुका, तब अंतिम राकेट छूटा। यान जो पूरी गति से घूम रहा था, धीमा पड़ा और पृथ्वी की ओर नियंत्रित गति से बढ़ने लगा। पृथ्वी तक आते-आते उसकी गति इतनी धीमी हो गई कि वह बिना यात्री को चोट पहुँचाये, ज़मीन से आ लगा।

यूरी गेगरिन, विश्व का प्रथम अंतरिक्ष यात्री बाहर निकला। सारे संसार में हलचल मच गई। दुनिया भर से उसे तथा उसके देश को बधाई के संदेश आये। अपने देश में उसका महान् वीर की तरह अभिनंदन किया गया।

गेगरिन की यात्रा ने मानव-जाति को एक और महान् सफलता प्रदान की। अब अंतरिक्ष में मनुष्य यात्रा कर सकता है। शीघ्र ही यह भी सम्भव होगा कि वह दूसरे ग्रहों में जाय। सम्भव है कि उन ग्रहों पर प्राणी हों। वे पता नहीं कैसे हैं। शायद वे हम जैसे मनुष्य हों। यदि वे मनुष्य हैं, तो पता नहीं उन्होंने कितनी वैज्ञानिक प्रगति की है ? क्या वे भी दूसरे ग्रहों

तक जाने के प्रयत्न कर रहे हैं ? क्या मंगल ग्रह निवासी पृथ्वी की यात्रा करने को उत्सुक नहीं हैं ? ऐसी कितनी ही सम्भावनाएँ हैं। सम्भव है, वहाँ मनुष्य ही हों और तब हमारा उनका संबंध हो जाय। तब हम पृथ्वी से मंगल ग्रह की यात्रा इस तरह करेंगे, जैसे पृथ्वी पर एक देश से दूसरे देश जाते हैं।

—:::—

जो अकस्मात हो गया

विज्ञान के अध्ययन में प्रयोगों का महत्व बहुत अधिक है। जो पढ़ा या समझा जाता है, उसे प्रयोग की कसौटी पर कसे बिना ज्यों-का-त्यों स्वीकार नहीं किया जाता।

वैज्ञानिक प्रयोगों को सफलतापूर्वक करने के लिए तीक्ष्ण अवलोकन शक्ति और पैनी दृष्टि की आवश्यकता पड़ती है। प्रयोगों के परिणामों से ही सन्तोष कर लेना भी यथेष्ट नहीं होता। परिणामों के पूर्व की विभिन्न दशाओं का सही अर्थ निकाल लेना, कम लोग जानते हैं। अक्सर ऐसा भी हुआ है, कि किसी विशेष परिणाम पर पहुँचने के पहले कुछ-न-कुछ असम्भावित घट गया है और उस असम्भावित घटना ने समस्त खोज या प्रयोग एक दूसरी ही दिशा में मोड़ दिया है। खोजा जा रहा है कुछ, मिल गया अचानक कुछ और !

पेनिसिलीन, रेडियम, गुरुत्वाकर्षण-शक्ति, भाप के एंजिन का सिद्धान्त, आइंसटीन के सापेक्षवाद के कतिपय अंश आदि अनेक खोजें आकस्मिक हैं। इन खोजों के पीछे वैज्ञानिक कभी नहीं थे, परन्तु उनकी अवलोकन-शक्ति का परिणाम है कि ये आविष्कार या खोज आज दुनिया के सामने हैं।

औषधि-विज्ञान के इतिहास में सम्भवतः पेनिसिलीन का आविष्कार एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना है। समस्त कीटाणुनाशक औषधियों में पेनिसिलीन का स्थान सर्वोपरि है। बीसियों प्राण-

नाशक व्याधियों के कीटाणुओं को यह विचित्र रूप से तथा कम-से-कम समय में विनष्ट कर सकता है। पेनिसिलीन के आविष्कार की कहानी अपने आप में बड़ी रोचक है।

लगभग २४ वर्ष पूर्व की एक सुबह। लन्दन। सन् १९२८। ठंड तेज और हवा नम। साधारण-से कमरे में, जिसमें न तो आधुनिक यन्त्र हैं और न अच्छे साधन उपलब्ध हैं कि वैज्ञानिक खोजों को आगे, सुचारु-रूप से बढ़ाया जाए। कमरे के दरवाजे, खिड़कियाँ जर्जर दशा में। यह भी सम्भव नहीं कि आसपास की शीतल हवा को भीतर आने से रोका जा सके।

कमरे में एक अधेड़ व्यक्ति टैस्टट्यूब को खोलता है बारी-बारी से। टैस्टट्यूब के अन्दर रखे पदार्थ को वह बाहर निकालता है। सूक्ष्म-दर्शक-यंत्र द्वारा उसका निरीक्षण करता है। अवलोकनों से उसे तनिक भी सन्तोष नहीं है और वह उदास होता जाता है। लेकिन अपने प्रयोगों को यों ही बीच में नहीं छोड़ता। यह उसका रोज का क्रम हो गया है।

सेन्ट मेरी अस्पताल, लन्दन के वे प्रोफेसर एलेक्जेंडर फ्लेमिंग हैं। अकेले खोज करने के वे आदी हैं, टीम के कार्य पर ज्यादा भरोसा करने के पक्षपाती वे नहीं हैं। फिर उनकी प्रयोगशाला भी तो आधुनिक नहीं। सभ्यता की दौड़ में आगे बढ़े हुए राष्ट्रों के वैज्ञानिक उनकी तथाकथित प्रयोगशाला देखें तो हँस पड़ें या मुँह बना लें। भला एक अति साधारण कमरे को कोई प्रयोगशाला कहेगा ? सबसे मजे की बात तो यह कि इस कमरे के आसपास गरीब या मध्यम श्रेणी के लोगों के निवास-स्थान हैं। और वे भी एकदम लापरवाह और निश्चिन्त-से।

सबेरे फ्लेमिंग आए अपने कमरे में। एक टैस्टट्यूब उठाई और सूक्ष्म-दर्शक-यंत्र से उसका अध्ययन करने लगे। अचानक उन्हें बिजली-का-सा धक्का लगा और वे चकरा-से गए। क्षण भर के लिए उन्हें कुछ सूझ ही नहीं पड़ा।

रात में तो उन्होंने एक टैस्टट्यूब में निरीक्षण करने के लिए पदार्थ रखा था। इस पदार्थ में यह कौन-सा पदार्थ आ गया? और सबसे आश्चर्य की बात यह है कि इस नए पदार्थ के कारण पहले से रखे पदार्थ के कीटाणु मर गए हैं। क्या वास्तव में इस नए पदार्थ ने ही वे कीटाणु मारे हैं? देखने में नया पदार्थ फफूंदर-सा है, लेकिन कीटाणु विनष्ट करने में तेज है।

फिर यह फफूंदर आ कहाँ से गया?

पड़ोस के किसी घर की गृहस्थिन के यहाँ बासी डबल-रोटी रखी होगी। नमी और ठंड के कारण डबल-रोटी में फफूंद शीघ्र लगता है। शायद इसीलिए उस डबल-रोटी में फफूंद लग गया होगा और खिड़की खुली रहने से वह फफूंद हवा के साथ उड़कर खुली हुई टैस्टट्यूब में गिर गया होगा। यहाँ धीरे-धीरे बढ़ गया।

इस मनोरंजक और आकस्मिक घटना ने फ्लेमिंग की जिज्ञासा बढ़ा दी। वही फफूंद उन्होंने अलग एक टैस्टट्यूब में पैदा की और उसका प्रभाव कीटाणुओं पर देखा। पाया गया कि उस विशेष फफूंद में कीटाणुओं को मारने की क्षमता है। फफूंद का आकार-प्रकार पेनिसिलियम नामक फफूंद से मिलता-जुलता था। इसीलिए उसका नाम पेनिसिलीन रखा गया।

फ्लेमिंग ने इस खोज का समाचार चिकित्सा-जगत को दिया और उसके प्रभाव के बारे में बतलाया।

परन्तु इस प्रकार की पेनिसिलीन ज्यादा उपयोगी नहीं थी क्योंकि उसे गाढ़े-रूप में लभ्य नहीं किया जा सकता था। गाढ़े-रूप में प्राप्त करने के उपायों से फ्लेमिंग अपरिचित थे। कई वर्षों के बाद आक्सफोर्ड के प्रोफेसर ने पेनिसिलीन को गाढ़े-रूप में प्राप्त करने की विधि खोज निकाली। गाढ़ी अवस्था में पेनिसिलीन का इस्तेमाल रोग-कीटाणुओं का नाश करता है, साथ ही रोगी पर वह किसी प्रकार का हानिकारक प्रभाव नहीं डालता। गत् महायुद्ध के दौरान में पेनिसिलीन का सर्वप्रथम प्रयोग शरीरांगों के घावों को कीटाणु-रहित करके उन्हें स्वस्थ रखने के निमित्त हुआ था।

* * *

'अवश्य मैंने अपने प्रयोग में गलती की है'—रेडियम धातु का पता लगाने वाली प्रसिद्ध वैज्ञानिक मैडम क्यूरी के मुँह से दो शब्द उस प्रयोग के समय निकले थे जिसके जरिये उन्होंने रेडियम का पहली बार पता लगाया था। उन्होंने अपने प्रयोग को दस बार दुहराया, फिर बीस बार और तब भी प्रयोग का वही नतीजा निकला जो पहली बार निकला था।

वर्षों से मैडम क्यूरी पढ़ रही थीं कि प्रसिद्ध वैज्ञानिक बैक्वेरेल ने ऐसी धातु को खोज निकाला है, जो अपने चारों तरफ एक विशेष प्रकार की किरणें फेंकती है। ये किरणें आस-पास के पदार्थों पर प्रभाव डालती हैं।

इसी पदार्थ के बारे में मैडम क्यूरी अधिक जानने को उत्सुक थीं।

जिस कच्चे पदार्थ से वह धातु प्राप्त की जा सकती थी, उसे लेकर मैडम क्यूरी ने प्रयोग किए। रात-रात भर वे प्रयोगशाला में काम करतीं और जब थक जातीं, तभी बिस्तरे पर जातीं। सुबह जल्दी आकर अपने काम में फिर जुट जाती थीं।

एक दिन सबेरे जब वे प्रयोगशाला में गईं तो उन्होंने उस कच्चे पदार्थ से एक खास किरणों को निकलते पाया जिसके कारण उन्हें विश्वास हो गया कि उस पदार्थ में कोई नई धातु अवश्य मौजूद है।

मैडम क्यूरी ने अपनी सम्भावना अन्य साथी वैज्ञानिकों से ज़ाहिर की, तो सभी ने कहा कि तुमने प्रयोग में कहीं कोई गलती जरूर की है। प्रयोग फिर से करो। किन्तु वे जानती थीं कि प्रयोग में गलती की गुंजाइश नहीं है।

वह अपने अटूट साहस और अध्यवसाय को लेकर अपनी धुन के प्रयोग में जुट गयीं। और उन्होंने रेडियम नामक मूल्यवान और दुर्लभ धातु को खोज निकाला।

और कोई होता तो उस आकस्मिकता पर ध्यान ही न देता। इस तरह संसार एक गुणकारी पदार्थ से वंचित रह जाता। क्योंकि अणु-परमाणुओं की दुनिया के रहस्योद्घाटन के लिए भी रेडियम ने अद्भुत साधन अपने विद्युत-कणों के रूप में हमें दिया है। आज रेडियम में निहित शक्ति को अपने वश में लाने

की बात वैज्ञानिक सोच रहे हैं। जिस दिन उनका यह स्वप्न सही उतर आएगा, अवश्य ही मनुष्य के हाथ में अपरिमित शक्ति का भंडार आ जाएगा।

*　　　　*　　　　*

आइज़क न्यूटन का नाम विज्ञान के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा है। जब तक संसार में विज्ञान है, न्यूटन को सम्मान और आदर की दृष्टि से देखा जाएगा।

यही न्यूटन जब पैदा हुए थे तो नर्स ने और फिर डाक्टर ने भी मत दिए थे कि वह बालक जीवित नहीं रहेगा। एक छोटे-से पानी के गिलास-नुमा बर्तन में उन्हें आसानी से रखा जा सकता था।

युवावस्था में न्यूटन अत्यन्त शर्मीले, नम्र, दयालु और मित-भाषी थे। अपने प्रयोगों और गणित के सूत्रों में व्यस्त रहा करते। खोजों को प्रकाशित कराने का उन्होंने कभी भी स्वप्न नहीं देखा। अक्सर खोए-खोए-से रहते। खाने-पीने की चिन्ता उन्हें न रहती।

गर्मियों में अपनी माँ के पास लौटते और वहीं छुट्टियाँ व्यतीत करते थे। किसी को वे सताते या उबाते तो थे नहीं, पर अकेले घंटों बैठे सोचा करते थे। बरामदे में, बगीचे में या जहाँ उनका मन होता, बैठ जाते।

एक दिन दोपहर के समय माँ के साथ भोजन करके वे बगीचे

में आ बैठे। किसी प्रश्न पर तन्मय-से विचार कर रहे थे। एका-एक सामने के सेब के पेड़ से सेब धरती पर टपका। न्यूटन की तन्द्रा-सी भंग हुई और फिर पहले के प्रश्न को छोड़कर उन्होंने सेब के गिरने के कारण पर विचारना प्रारम्भ किया। फिर अचानक पागलों-से चिल्ला पड़े—"मुझे मिल गया, मुझे मिल गया।" भागकर अपने अध्ययन-कक्ष में पहुँचे और डायरी में कुछ लिख लिया।

ठंडा देश। एक छोटा गाँव। पेड़-पौधों से घिरा घर का आँगन। एक पेड़ के नीचे रखी कुर्सी।

किसी समय बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ था, बोधिसाख के नीचे बैठे-बैठे। न्यूटन को भी प्रकृति के एक रहस्य का पता चला, सेब के पेड़ के तले बैठने से। दोनों घटनाओं में कितना साम्य है ! समय और स्थान तो जैसे गौण हैं, प्रधान है मनुष्य की अवलोकन और कल्पना-शक्तियाँ।

पदार्थ इसलिए गिरते हैं कि पृथ्वी अपनी गुरुत्वाकर्षण शक्ति से उन्हें अपनी ओर आकर्षित करती है। पृथ्वी के भीतर कहीं एक केन्द्र है, जिसकी ओर गिरने वाले सभी पदार्थ खिंचते हैं। ऊपर आकाश की ओर या यन्य किसी दिशा में नहीं जाते। ग्रहों, तारों और भौतिक वस्तुओं के मध्य यह आकर्षण मौजूद है। कण-कण के बीच यह आकर्षण रहता है और इस प्रकार सभी वस्तुएँ अपनी-अपनी जगह स्थिर रहती हैं।

लम्बे समय तक न्यूटन का यह नियम विज्ञान-जगत में छाया रहा और वैज्ञानिकों को इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर सोचने के लिए विवश करता रहा।

इसी नियम के कारण गति के नियमों की खोज हो सकी। आइंसटीन जैसे प्रकांड विद्वान् भी इस नियम को सुलझाते-सुलझाते सापेक्षवाद-जैसे सिद्धांत तक पहुँच सके।

× × ×

बच्चों की आदत निराली और अजीब होती हैं। किस समय वे क्या कर बैठ या सोचें, कोई नहीं जानता। पढ़ना-लिखना छोड़कर माँ के पास चले जाना, वहीं समय बिताना, बालकों को विशेषरूप से प्रिय होता है।

एक दिन ऐसा ही एक नटखट बालक किताब पटक कर माँ के पास चला गया। माँ तो कार्य में व्यस्त थी और कार्य भी क्या ? वही, जो हर देश, जाति, धर्म या सम्प्रदाय की माताएँ करती हैं। घर के लोगों का भोजन बनाना। भोजन बनाने की कला अपने-आप में महत्वपूर्ण है। चूल्हे के आसपास तरह-तरह की आवाजें रहती हैं। बर्तनों की खड़खड़ाहट, उबलते पानी का मीठा-मीठा शोर, सिल-बट्टे की लड़ाई !

चाय उबल रही थी या शायद पानी उबल रहा था चाय के लिए। छोटा-सा बर्तन था और उसके मुँह पर छोटा-सा ही ढक्कन ढँका था। माँ कुछ और कर रही थी और कुछ समय के लिए उसका ध्यान उबलते पानी पर नहीं था।

ढक्कन धीमे-धीमे उठ-उठकर गिर जाता था। उबलते पानी से भाप उठ रही थी, लेकिन ढक्कन के कारण ठीक से बाहर नहीं निकल पाती थी। ढक्कन के किनारे जो थोड़ी-सी जगह थी, वहीं से भाप सीं-सीं की आवाज करती हुई निकल रही थी। कभी-

कभी ढक्कन उठता और गिर जाता। भाप कभी-कभी ढक्कन को धक्का देकर उठा देती। यह क्रम चलता रहा।

वह बालक इस नाटक को घूर कर देखता रहा। उसके दिमाग की नसों में खिचाव-सा होने लगा।

उसने एक बहुत बड़ी शक्ति का रहस्य पा लिया। उस बालक का नाम था जेम्स वाट।

आगे चलकर जेम्स वाट ने भाप से चलने वाले एंजिन के सिद्धांत को खोज निकाला। भाप से संचित शक्ति का उपयोग करने का उसने तरीका पा लिया। इस नितांत मामूली घटना ने यातायात की दुनिया में क्रांति कर दी।

रेलवे एंजिनों और दूसरे एंजिनों में भाप का उपयोग किया गया।

भाप के ताकतवर धक्के से बड़ी-बड़ी मशीनें चलाई गईं। रेलगाड़ी चलाई गई और मनुष्य की सुविधाएँ बढ़ गईं।

समस्त विश्व में आज भी भाप से चलने वाले एजिनों का महत्व वैसा ही बना हुआ है, जैसा उनके आविष्कार के समय था।

बटन दबाते ही भाप पिस्टनों को धक्का देती है और टनों वजन की रेलगाड़ी पटरी पर आसानी से सरकने लगती है। टिकट खरीदकर रेल के डिब्बे से बैठा यात्री क्या जाने कि

कितनी छोटी घटना ने कितना गजब का आविष्कार कर दिया था।

× × ×

दीवाली या होली के अवसर पर भारतवर्ष के अनगिनती मकानों की सफाई, लिपाई, पुताई होती है। ऊँची-ऊँची सीढ़ियों पर मजदूर चढ़कर दीवारें साफ करते हैं और उन्हें पोतते हैं। कभी-कभी किसी मजदूर का पैर फिसल जाता है और फिर उस बेचारे को सीधे अस्पताल में दाखिल होना पड़ता है।

सीढ़ियों या नसैनी से किसी का गिरना उसके लिए वरदान सिद्ध हो सकता है। कोई इस पर विश्वास नहीं करेगा। और किसी के लिए हो न हो, आइंसटीन के लिए यह घटना वास्तव में बरदान सिद्ध हुई।

प्रथम महायुद्ध के दिनों में आइंसटीन बर्लिन में रहते थे। युद्ध की विभीषिका से वे विचलित होकर, एक सूने कमरे में समय और गति के विषय में सोचा करते। घर के छोटे-मोटे काम में भी हाथ बँटाते।

दीवार में टंगी तस्वीरों को साफ करते, फर्नीचर ठीक करते।

दीवार में टंगे एक चित्र को बदलते हुए आइंसटीन का पैर नसैनी से फिसल गया और वे फर्श पर धमाक से आ गिरे। चोट तो सौभाग्य से उन्हें न आई। इस गिरने के बारे में उन्होंने खूब सोचा। यह गिरना, न्यूटन के सेब के गिरने से अधिक महत्वपूर्ण साबित हुआ।

वे गुरुत्व के सिद्धांत पर विचार करने लगे। उन्होंने घोषणा कर दी कि वस्तुएँ पृथ्वी के केन्द्र की ओर गुरुत्वाकर्षण शक्ति के

कारण नहीं गिरतीं। गुरुत्वाकर्षण-केन्द्र जैसी कोई चीज नहीं है। वस्तुएँ या तो ऊपर जाती हैं या नीचे गिरती हैं।

वस्तुएँ हमेशा सरल मार्ग चुनती हैं। जिस पथ पर उन्हें कम-से-कम अवरोध का सामना करना पड़ता है, वही मार्ग वे चुनती हैं और उसी पर चल पड़ती हैं। कठिन और अवरोध के मार्ग पर वे नहीं चलतीं। उन्हें किसी प्रकार की रहस्यमय शक्ति नहीं खींचती।

इस सरल सिद्धांत ने भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में अनेक नए क्षितिज खोले और सापेक्षवाद-जैसे कठिन सिद्धांत के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

———

लोभ जिन्हें नहीं जीत सका

रेडियम को अभी तक सबसे मूल्यवान् धातु माना जाता है। स्वर्ण की अपेक्षा २४००० गुनी महँगी धातु रेडियम ने चिकित्सा शास्त्र में अपने लिए विशेष-महत्व प्राप्त कर लिया है। कैन्सर-जैसे भयानक रोगों के लिए रेडियम का प्रयोग किया जाता है। आज भी रेडियम का भाव २४ लाख रुपये प्रति तोला है।

इस मूल्यवान धातु की खोज मैडम क्यूरी ने अपने पति के साथ मिलकर की थी। इसको निकालने की विधि मैडम क्यूरी की खोजी हुई थी।

कई कम्पनियों के एजेन्ट मैडम क्यूरी के पास गए और उन्होंने रेडियम निकालने की विधि को पेटेन्ट कर लेने की सलाह मैडम क्यूरी को दी। पेटेन्ट कराने का अर्थ था कि करोड़ों रुपये की आमदनी थोड़े-से समय में।

मैडम क्यूरी ने उन एजेन्टों से साफ-साफ कह दिया—"रेडियम का काम सेवा है मानव-जाति की और उस पर सारी दुनिया का अधिकार है।" पेटेन्ट कराने की बात से वे केवल हँस पड़ीं।

मैडम क्यूरी के पति पियरे क्यूरी को फ्रांस का बहुत बड़ा सम्मान दिए जाने का निश्चय किया गया। यहाँ तक कि उनकी पत्नी भी इस पर सहमत हो गयीं। पर पियरे क्यूरी ने अत्यंत विनम्रता से कह दिया—"कृपया यह सम्मान मुझे मत दीजिए। देना ही है कुछ तो मुझे एक साधारण-सी प्रयोगशाला दीजिए जहाँ हम आराम और शांति से अपना काय आगे बढ़ा सक। इस समय मुझे एक प्रयोगशाला की शीघ्र आवश्यकता है।"

उनकी निस्पृहता देखकर सारा संसार दंग रह गया। जीवन भर दोनों सम्मान, भीड़, पैसे, लालच, चाटुकारिता और विज्ञापन से बचते रहे। साधारण कपड़े हमेशा पहनते। पत्रकार या फोटोग्राफ़र तक इन्हें पहचानने में चूक जाते। वे उन्हें साधारण व्यक्ति समझते।

फ्रांस के ही एक करोड़पति औसिरिस ने ६०००० रुपये का इनाम पास्चर इन्सटिट्यूट के डायरेक्टर डॉक्टर रुक्स को एंटीडिफथीरिया सीरम के आविष्कार के उपलक्ष में दिया था। डिफथीरिया बड़ा भयानक रोग है। कुछ दिन पहले यह रोग अत्यंत घातक समझा जाता था। इस रोग से पीड़ित अधिकांश व्यक्तियों की मृत्यु हो जाती थी। डिफथीरिया अक्सर बच्चों को हुआ करता है। गले के भीतर खराबी होने से सांस लेना दुश्वार हो जाता है। रोगी बेचैन हो जाता है और छटपटाने लगता है। पत्थर दिल भी पिघल जाए यह तड़पन देखकर यह करुण दृश्य देखकर। ऐसे भयानक रोग से त्राण दिलाने वाले का जितना सम्मान किया जाए कम है। मनुष्य-जाति का वास्तव में बड़ा उपकार किया है इस दवा को खोजने वाले ने। लाखों रुपये का इनाम भी कम है इस खोज के लिए। यदि ठीक समय पर इलाज हो जाए तो रोगी का इस रोग के कारण बाल भी बाँका नहीं हो पाता।

पारितोषिक मिलते ही सारा रुपया डॉक्टर रुक्स ने पास्चर-संस्था को दे दिया। औसिरिस ने जब यह बात सुनी त उन्होंने डॉक्टर से इसका कारण जानना चाहा। उत्तर में डॉक्टर रुक्स ने कहा—"जो कुछ भी मैंने किया है वह इसी पास्चर-संस्था में रहकर किया है। अभी यह संस्था बड़ी गरीब है। दवा को बेचकर जितना रुपया प्राप्त होता है, वह सब यहाँ लग जाता है और अपर्याप्त भी पड़ता है। अगर भविष्य में डिफथीरिया

की और कोई दूसरी दवा निकल आएगी, तो संभवतः पास्चर-संस्था का कार्य ठप्प पड़ जाएगा।"

डाक्टर रुक्स का उत्तर सुनकर फ्रांस के रईस औसिरिस चुप रह गए। उनके मुँह से एक शब्द भी न निकला। कुछ समय बाद औसरिस की मृत्यु हो गई। उनका वसीयतनामा खोला गया तब उसमें लिखा था—"डाइरेक्टर की योग्यता और स्वार्थ-त्याग के स्मारक रूप में मैं अपनी सम्पत्ति का अधिकांश पास्चर-संस्था को देता हूँ।"

पास्चर-संस्था को लगभग दो करोड़ रुपये प्राप्त हो गए। इसका कारण सिर्फ डॉक्टर रुक्स की ईमानदारी और उदारता थी।

सर हम्फ्रे डेवी ने विज्ञान-जगत में इतने महत्वपूर्ण और उपयोगी आविष्कार किए हैं कि उनका नाम विज्ञान के इतिहास में सदा-सदा के लिए स्वर्णाक्षरों में लिख गया है। विद्युत और रसायन-शास्त्र में उन्होंने अनेक खोजें की हैं, जिनसे मानव-जाति का बहुत उपकार और लाभ हुआ है। लोक-हित की दृष्टि से उनके कई आविष्कार बहुत महत्व के हैं। उनका "रक्षा-दीप" तो मानो संसार के लिए वरदान-सा है। विशेषरूप से कोयला-खदानों में काम करने वालों के लिए 'रक्षा-दीप' तो ईश्वर-जैसा है।

पत्थर का कोयला खदानों से निकाला जाता है। पत्थर का कोयला कारखानों, रेल-एंजिनों, विद्युत-घरों, जहाजों और अन्य सैकड़ों काम में आता है। प्रायः सभी बड़े-बड़े उद्योग कोयले पर निर्भर रहते हैं। उद्योगों का विकास कोयले की खपत पर ही निर्भर रहता है।

वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि प्राचीन काल में हरे-भरे जंगल थे। भू-गर्भ सम्बन्धी जो परिवर्तन धरातल में हुए हैं, उनके कारण जहाँ आज जंगल है, वहाँ शायद समुद्र रहा होगा, जहाँ

समुद्र है, वहाँ महाद्वीप रहा होगा। ऐसे परिवर्तन पृथ्वी-मंडल के इतिहास में अनेक हो चुके हैं और यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि पुराने जमाने में जंगल, भू-स्खलन होने से दब जाते रहे हैं। पृथ्वी के दबाव और गर्मी के कारण धीरे-धीरे वे हरे-भरे जंगल कोयले का रूप ले लेते हैं। पूरा का पूरा जंगल पत्थर का कोयला बन जाता है। धरती के नीचे मीलों तक कोयले की सतह पाई जाती है। कभी-दभी दबे हुए पौधों-पेड़ों की पत्तियाँ, शाखाएँ, पींड़, जड़ें इत्यादि कोयले के बीच में मिलती हैं। ये परिवर्तन लाखों साल में होते हैं। धीरे-धीरे बड़े-बड़े जंगल कोयले का बृहत-भंडार बन जाते हैं। कोयले के ऐसे भंडारों से तरह-तरह की गैसें निकलती हैं। इन गैसों में अधिकांश भाग उन गैसों का रहता है जो ज्वलनशील हैं। अर्थात् स्वतः जलती हैं, लौ पा जाने पर। इनमें गैसों में मुख्य मार्श गैस, उद्जन गैस, कोल गैस इत्यादि मुख्य हैं। कोल गैस वास्तव में अनेक गैसों का मिश्रण है। इन गैसों में मार्श गैस सबसे भयंकर गैस होती है। यदि मार्श गैस के साथ वायु मिलाकर बत्ती लगा दी जाए तो बड़े जोर का धड़ाका होता है और मार्श गैस जलने लगती है।

मार्श गैस सभी कोयला खदानों में पाई जाती है। संसार के किसी भी भाग में, किसी भी देश में जहाँ ये पत्थर के कोयले की खानें हैं, मार्श गैस वहाँ मौजूद रहती है। लगभग सौ वर्ष पहले ऐसे धड़ाके खानों में बहुत हुआ करते थे और बहुत-से आदमी जान खो बैठते थे। कोई उपाय नज़र नहीं आता था कि क्या किया जाय ? कैसे बचा जाए इन धड़ाकों से ?

सर डेवी ने 'रक्षा दीप' निकाला। इस दीप में यह गुण है कि यदि उसके चारों ओर जलने वाली गैस भरी हो तो उसकी लौ बढ़ जाती है, परन्तु, वह जाली से, जो उसको चारों तरफ से

ढके रहती है, बाहर निकलकर गैस को जला नहीं देती। एक सरल प्रयोग किया जा सकता है। एक स्परिट लैम्प की बत्ती के ऊपर आधा इंच की ऊँचाई पर एक बारीक जाली लगा दी जाए। स्परिट लैम्प को जलाकर बुझा दिया जाए और शीघ्रता से दियासलाई जाली के ऊपर ठेठ बत्ती के ऊपर जलाकर रख दी जाए। जाली के ऊपर एक जलती लौ दिखाई देगी। यह लौ जाली को भेदकर नीचे गैस को न जलने देगी।

इस तरह कोयला की खानों में अत्यंत विस्फोटक मार्श गैस की उपस्थिति जानी जा सकती है और उससे बचाव भी किया जा सकता है। कम-से-कम धड़ाका नहीं होता। हजारों जानों की रक्षा हो जाती है। वैसे 'रक्षा दीप' की रचना बहुत सरल है, पर उसकी उपयोगिता बहुत बड़ी है।

इस आविष्कार की बदौलत यदि डेवी साहब चाहते तो लाखों रुपया कमा सकते थे। उनके एक मित्र जान बडिल उनके सम्बन्ध में लिखते हैं—"मुझे प्रतीत होता था कि डेवी अर्थ लाभ करना नहीं चाहते। एक बार मैंने उनको इस सम्बन्ध में बहुत समझाया और कहा कि यदि आप चाहें तो इस आविष्कार का पेटेण्ट करा लें और घर बैठे दस-पाँच हजार पौंड ले लिया करें। डेवी ने जवाब दिया—"प्रिय मित्र, मेरा यह उद्देश्य कभी न था। मैंने तो केवल जनता की भलाई के लिए ही किया है यह आविष्कार। सफल होने से मुझे अपनी शुभेच्छा की पूर्ति होती दिखाई देती है, मेरे लिए यही सबसे बड़ा पुरस्कार है।"

विज्ञान के इस प्रगतिशील युग में डेवी का 'रक्षा-दीप' आज भी कोयला खदानों में बहुतायत से काम में लाया जाता है। कोयला खानों की जलने वाली गैसों के कारण अब उतने विस्फोट नहीं होते।

फैराडे ने एक बार टिंडल साहब से कहा था—"मेरे वैज्ञानिक

जीवन में एक समय आया था जब मैं इस बात का निश्चय रूप से निर्णय करने पर मजबूर किया गया था कि मैं शुद्ध वैज्ञानिक खोज में अपना समय लगाऊँ या रुपया कमाने में। दो मालिकों की सेवा करना आसान काम नहीं था। कहिये असम्भव था। अंत में मैंने विज्ञान को ही श्रेष्ठ समझा।" चुम्बक-विद्युत के आविष्कार कर लेने पर फैराडे संसार में इतने विख्यात हो गये थे कि उन्हें १,५०,००० वार्षिक कोई भी कारखाना दे देता। टिंडल ने लिखा है कि इस लोहार के बेटे और जिल्द-साज के शागिर्द को धन-हीन विज्ञान और १,५०,००० रुपयों की रकम में से जो वह नौकरी कर अपने जीवन में सुगमता से कमा सकता था, एक को स्वीकार करना था। उसने विज्ञान को ही अपनाया और वह धन-हीन मरा। परन्तु, चालीस वर्ष तक वैज्ञानिक संसार में इंग्लैंड को यशस्वी बनाये रखना उसी का काम था। फैराडे ने विद्युत के प्रयोगों में जितना काम किया है, शायद ही उस समय और किसी वैज्ञानिक ने किया हो।

चुम्बक के पास किसी तार-युक्त बेठन को घुमाने से बिजली की धारा बेठन में पैदा हो जाती है। अर्थात् एक चुम्बक ले लिया जाए और उसके चारों ओर एक गोलाकार तार रखा जाए तो उस तार में बिजली की धारा पैदा हो जाती है। यही चुम्बक विद्युत का सिद्धांत है जो फैराडे ने बड़े परिश्रम से निकाला था। जब इस सम्बन्ध में वे पहली बार रॉयल इन्सटिट्यूट में व्याख्यान दे रहे थे तब एक महिला ने उनसे पूछा था—"महाशय, यदि आपकी कही बात सच भी निकली, तो भी उससे क्या लाभ है?" सुनकर फैराडे ने कहा था—"नव-जात शिशु से क्या लाभ होता है?" वह महिला सुनकर चुप हो गयीं।

परन्तु इस घटना से यह ज्ञात हो जाता है कि वैज्ञानिकों और साधारण आदमियों के आदर्शों में कितना अन्तर होता है।

साधारण व्यक्ति बात-बात में लाभ और पैसा खोजा करता है। वैज्ञानिक अपनी खोजों में व्यस्त रहकर संसार का भला करता है।

आर्कमिडीज विज्ञान का प्रथम प्रमुख व्यक्ति माना जाता है। उसने अनेक प्रयोग और आविष्कार करके विज्ञान के भंडार में वृद्धि की है। लीवर, घिर्री, सायफन, अनेक सिद्धांत उसकी खोज हैं। एक दिन नहाते समय आर्कमिडीज को एक सूत्र मिल गया। जिस बात की खोज में वह बहुत दिनों से था, उसे उसका रहस्य ज्ञात सो गया। कहा जाता है, वह सुध-बुध भूलकर भागा था वहीं टब से, नंग-धड़ंग सड़कों पर से चिल्लाता हुआ। उस दिन उसने विशिष्ट-घनत्व निकालने की एक नई विधि का आविष्कार किया था।

लुई पास्चर ने माता के टीके, संक्रामक बीमारियों के टीके आदि खोजे थे। वे ही पास्चर कहा करते थे—"रात का समय इंतजार का होता है। रात खतम होने के बाद हम अपना प्यारा काम प्रारम्भ करते हैं।" पास्चर को अपने काम में बहुत आनंद आता था। वे सब चीजें भूलकर विज्ञान की खोजों में लगे रहते थे।

एक बार पास्चर, जो एक पागल कुत्ते की लार प्राप्त करना चाहते थे अपने मुँह में एक टेस्ट ट्यूब दबाकर, अपने प्राणों की परवाह न करके, उस पागल कुत्ते के मुँह के पास झुक गए और लार इकट्ठी कर ली।

रसायन शास्त्र के जन्मदाता स्वनामधन्य राबर्ट बायल कहा

करते थे—"मैं अपनी प्रयोग-शाला में लोक-परलोक सब भूल जाता हूँ। प्रयोग करने के अपूर्व आनन्द के निरंतर अनुभव में तल्लीन रहता हूँ।" वे अक्सर बोला करते थे—"मरने से मुझे डर है तो केवल एक बात का। मार कर मुझे सब बातें भूल जाएँगी और आविष्कार के बाद मुझे जो आनंद आता था वह न आएगा।"

भारतीय वैज्ञानिकों में सर प्रफुल्ल चन्द्र राय का बहुत नाम है। उन्होंने रसायन शास्त्र और चिकित्सा शास्त्र में अनेक खोजें की हैं। त्याग और तपस्या की तो मानो मूर्त्ति थे। उन्हें अपने जीवन काल में बहुत बड़ी तनख्वाह मिलती रही है। उन्होंने कभी न तो रुपये कमाने की परवाह की और न किसी प्रकार के दिखावे में वे पड़े। जो उन्हें मिलता था उसे वे गरीबों में बाँट दिया करते थे। वे स्वयं एक कमीज, कोट और धोती में ही गुजर कर लेते थे। अपने विद्यार्थियों को वे सादगी और सरल जीवन का उपदेश सदैव देते थे।

एक बार राय साहब प्रोफेसर नागेन्द्र चन्द्र नाग के यहाँ गए। नाग साहब बनारस विश्वविद्यालय में काम करते थे। राय साहब विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की परीक्षा लेने आए थे और नाग बाबू के यहाँ ठहरे थे। प्रोफेसर साहब की बहुत बढ़िया कीमती तौलिया जब उन्हें हाथ पोंछने को दी गई तब उन्होंने कई बार उलट-पुलट कर देखा और कहा—"तबियत चाहती है कि इसे चुराकर ले जाऊँ।"

वास्तव में राय साहब के सब कपड़ों के मूल्य के बराबर नाग साहब की एक तौलिया थी। इस बात को सुनकर सभी

उपस्थित लोग समझ गए थे कि राय साहब कीमती और बढ़िया चीजों के खिलाफ थे।

"यह मेरे पूर्वजों की नीति और धर्म के विरुद्ध है।"—यह बात विख्यात वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बसु ने कही थी। उन्होंने अपने आविष्कारों से कभी भी पैसा पैदा करने की बात नहीं सोची। सन् १८८६ में वे इंग्लैंड में अपने बे-तार के आविष्कारों पर व्याख्यान दे रहे थे। उस समय कई यन्त्र-निर्माताओं ने उनसे अनुरोध किया था कि वे अपने यंत्रों को पेटेन्ट करा ल। उसी के जवाब में उन्होंने कहा था कि पैसा कमाना मेरे धर्म के खिलाफ है।

एक और प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक कृष्णन सीधे-सादे व्यक्ति थे। नंगे पैर उन्होंने भारत के विभिन्न भागों की यात्रा की थी। सरल जीवन बिताते थे और समाज के सामने वे सच्चाई और परिश्रम के उदाहरण रखते थे।

चन्द्रशेखर वेंकट रमन भी सादा जीवन बिताते हैं और अवकाश के क्षणों में संगीत से जी बहलाते हैं।

वर्तमान युग के सबसे प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंसटीन नहाने और दाढ़ी बनाने के लिए एक ही प्रकार का साबुन उपयोग में लाया करते थे। वे कहा करते थे कि मैं अपने जीवन में किसी प्रकार का बंधन या उलझन नहीं चाहता। आइंसटीन भी विज्ञान की खोजों के बाद अवकाश के क्षणों में वायलिन बजाया करते थे और भीड़-भाड़ से बचा करते थे। विश्व-शांति के लिए वे सदा प्रयत्नशील रहा करते थे और गाँधी जी के प्रशंसकों में से

थे। विश्व-सरकार बनाने के पक्ष में थे। अंत-अंत तक वे चाहते रहे कि नागासाकी और हिरोशिमा पर एटम बम न गिराए जाएँ। विश्व-शांति के स्थापनार्थ एक बार उन्होंने संसार के विभिन्न देशों की यात्रा की थी।